॥ ओ३म् ॥

दयानन्दसन्देश

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट का मासिक पत्र

Date of Printing = 05-08-21
प्रकाशन दिनांक = 05-08-21

अगस्त २०२१

वर्ष ५० : अङ्क १०
दयानन्दाब्द : १९७
विक्रम-संवत् : श्रावण-भाद्रपद २०७८
सृष्टि-संवत् : १,९६,०८,५३,१२२

संस्थापक : स्व० ला० दीपचन्द आर्य
प्रकाशक व सम्पादक : धर्मपाल आर्य
सह सम्पादक : ओमप्रकाश शास्त्री
व्यवस्थापक : विवेक गुप्ता

कार्यालय :
दयानन्दसन्देश (मासिक)
४२७, मन्दिर वाली गली, नया बांस,
खारी बावली, दिल्ली-६
दूरभाष : २३९८५५४५, ४३७८११९१
चलभाष : ९६५०५२२७७८
E-mail : aspt.india@gmail.com

कुल पृष्ठ २८
एक प्रति १५.०० रु०

वार्षिक शुल्क १५०) रुपये
पंचवर्षीय शुल्क ५००) रुपये
आजीवन शुल्क ११००) रुपये
विदेश में ५०००) रुपये

इस अंक में

- ❑ वेदोपदेश २
- ❑ ताबीज ३
- ❑ उत्तर प्रदेश जनसंख्या नियंत्रण बिल ४
- ❑ पूर्वमीमांसा के आधार पर दिए गए ६
- ❑ क्या घुसपैठियों ने बदले देश के ९
- ❑ महर्षि दयानन्द की सही परिभाषा– ११
- ❑ देशभक्त या आतंकवादी १३
- ❑ मनुष्य की ही तरह पशु-पक्षियों को १६
- ❑ मांसाहार उचित या अनुचित ? १९
- ❑ लोहारू कांड–स्वामी स्वतंत्रतानन्द जी... २२
- ❑ भारतीय शिक्षा का सर्वनाश २४
- ❑ संवाद : लड़की और स्वामी जी का २५
- ❑ काशी में चरित्र की परीक्षा २६

विशेष : दयानन्द सन्देश में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। उनसे सम्पादक की पूर्णतया सहमति आवश्यक नहीं है। अतः किसी भी चर्चा/परिचर्चा एवं वाद-विवाद के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी होंगे।

सत्यार्थप्रकाश
प्रचार संस्करण – ३००० रुपये सैकड़ा
स्पेशल (सजिल्द) – ५००० रुपये सैकड़ा में प्राप्त करें।

॥ ओ३म् ॥

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। —महर्षि दयानन्द

वेदोपदेश—यद् द्यावइन्द्र ते शतं शतं भूमीरुत स्युः ।
न त्वा वज्रिन्त्सहस्रं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी ॥

—सा० उ० ४।४।१।१ (८६२)

शब्दार्थ—हे **इन्द्र** = परमैश्वर्यसम्पन्न ! अनन्त शक्ति-सम्पन्न भगवन् ! **यत्**=चाहे तो **ते**=तेरे **शतम्**=सैकड़ों **द्यावः**=द्युलोक, प्रकाशपुञ्ज हों **उत**=अथवा **शतम्**=सैकड़ों **भूमीः**=भूमियाँ भी **स्युः**=हों, किन्तु हे **वज्रिन**=वारक-शक्तिवाले प्रभो ! ये सब **रोदसी**=लोक-लोकान्तर तथा **सहस्रम्**=हजारों **सूर्याः**=सूर्य **जातम्**=सर्वत्र विद्यमान् **त्वा**=तुझको **न**=नहीं **अनु+अष्ट**=पहुँच पाते ।

व्याख्या—संसार में दो प्रकार के लोक हैं—१. स्वतः-प्रकाश और २. परतः-प्रकाश । सूर्य स्वतः प्रकाश है और भूमि-चन्द्रादि परतः-प्रकाश हैं, ये सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं । वेद की परिभाषा में इन्हें द्यौ और पृथिवी, द्यावापृथिवी, द्यौ और भूमि, द्यावाभूमि, सूर्य और चन्द्र आदि विविध नामों से पुकारा जाता है । इनकी महिमा तो देखिए । भूमि पर से करोड़ों वर्षों से मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट-पतङ्ग, सरीसृप, व्याल, भुजङ्ग आदि नाना प्राणी अपनी भोग्य सामग्री ले रहे हैं, किन्तु माता वसुन्धरा आज तक भी विश्वम्भरा बनी हुई है, आगे भी बनी रहेगी । भूमि का एक नाम 'रसा' है, सचमुच मधुर, तिक्त, अम्ल, कटु, कषाय आदि सारे रस भूमि में हैं । सोना-चाँदी-लोहादि धातु-उपधातुओं की खान भी यही है । कहीं मर्मर[१] पत्थर है, कहीं चिकनी मिट्टी है, कहीं रेत है । कहीं छह मील ऊँचा पर्वत मानो आकाश से बातें करने को सिर उठाये खड़ा है, कहीं उतना ही गहरा सागर है । कहीं नदी-नालों की कलकल ध्वनि है, तो कहीं समुद्र में उत्तुङ्ग तरङ्गें उठ रही हैं । कहीं सस्यश्यामला मनोहारिणी रमया मही है तो कहीं तृणविहीन बालुकामय जलशून्य प्रदेश है । संसार के आरम्भ से लेकर आज तक के सारे वैज्ञानिक अपनी शक्ति लगा रहे हैं, किन्तु इस ससीम, परिछिन्न, सान्त एक भूमि की सीमा=परिच्छेद=अन्त नहीं पा सके और यदि ये सैकड़ों हों तो फिर इनकी कितनी महिमा, कितनी गरिमा होगी ? मनुष्य इसकी कल्पना नहीं कर सकता ।

आओ, द्यौ का तनिक विचार करें । भूमि जहाँ एक क्षुद्र-सा टापू है वहाँ द्यौ एक विशाल सागर है । हमारा प्रतिदिन का परिचित सूर्य भार में पृथिवी से साढ़े चार लाख गुना भारी बताया जाता है । कहा जाता है, इस सूर्य में हमारी पृथिवी की-सी तेरह लाख पृथिवियाँ समा सकती हैं । वह महान् सूर्य जिससे हमारी पृथिवी उत्पन्न हुई है, द्यौरूपी विशाल सागर में एक तुच्छ कमल-सा है । ऐसे क्या इससे भी बड़े असंख्य सूर्य इस द्यौ-सागर में टिमटिमा रहे हैं कहो, या चमचमा रहे हैं कहो ।

---

१. सङ्गेमर्मर ।

क्या इनकी शक्ति की कल्पना कर सकते हो ? आः !!! वेद कहता है, अनन्त द्यौ और अनन्त भूमि तथा असंख्य सूर्य और लोक मिलकर भी उस महान् भगवान् को नहीं पहुँच पाते अर्थात् उसके सामने यह सारा विशाल संसार तुच्छ है । वेद ने स्पष्ट कहा है–

एतावानस्य महिमाऽतो ज्यायांश्च पूरुषः –यजुः० ३१।३

यह सारा संसार उसकी महिमा का पसारा है, वह पूर्ण तो इससे बड़ा और न्यारा है ।

भगवान् ने इस जहान् को पैदा किया है, जैसा कि वेद ने कहा है–

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् । दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः॥

—ऋ० १०।१९०।३॥

जगन्निर्माता ने पूर्व की भाँति सूर्य, चाँद, द्यौ, अन्तरिक्ष और स्वः=आनन्द की रचना की। बनी वस्तु बनानेवाले को कैसे पावे ? इसीलिए कठ ऋषि ने कहा–

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।
तमेव भान्तमनु भाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ॥ –कठो० ५।१५

न वहाँ सूर्य चमकता है, न चाँद–तारे, न ही बिजलियाँ चमकती हैं, यह अग्नि तो कहाँ से? उसकी चमक के पीछे ही सभी चमकते हैं । उसके प्रकाश से यह समस्त जगत् प्रकाशित होता है। सभी उसके प्रकाश से प्रकाशित होते हैं, तो यह स्पष्ट है कि ये सब मिलकर उसकी बराबरी नहीं कर सकते । उसकी तुलना का कोई पदार्थ इस ब्रह्माण्ड में नहीं है । ये सब मिलकर भी सीमावाले हैं और वह है असीम । अतएव वह–

विश्वस्य मिषतो वशी । –ऋ० १०।१९०।२॥

सभी गति करने वालों का वशी है, नियन्त्रणकर्ता है । जड़–चेतन, स्थावर–जङ्गम, चर–अचर सभी उसके शासन में चलते हैं । इस प्रकार उसे अप्रतर्क्य समझकर महात्मा चुप हो जाते हैं । ससीम असीम का वर्णन कैसे करे? केवल अनुभव कर सकता है, उसका वर्णन नहीं कर सकता । ●

ताबीज

क्या आपके गले या हाथ में भी कोई ताबीज, नीला, लाल या काला धागा बांधा हुआ है ?

क्या आप भी बुरी नजर से बचने के लिए, ऊपरी बला से बचने के लिए, शारीरिक रोग के लिए, धन की कमी के लिए, भूत प्रेत से बचने के लिए, पारिवारिक सदस्य को वश में करने के लिए पहनते हैं ?

मैंने एक मौलवी को देखा है जो मधुमेह के लिए गले में बांधने का धागा देता था । अनेकों पढ़े लिखे मूर्ख उससे यह धागा लेकर आते थे और मानते थे कि इससे सचमुच मधुमेह ठीक हो जाएगा।

एक घटना आजकल मीडिया में बहुत प्रसिद्ध है । गाजियाबाद के लोनी का एक अब्दुल समद सैफी लोगों को मंहगे ताबीज देकर काम हो जाने की गारण्टी देता था ।

उसने किसी को मनचाहे काम (शायद मनचाहा प्यार) के लिए ताबीज दिया । ताबीज का लाभ न होने पर 5 जून को उसे कुछ लोगों ने मारा पीटा ।

मामले में उसी दिन एफ.आई.आर. भी दर्ज होती है । अब्दुल के द्वारा जिसमें प्रवेश, आदिल, शाहिद, मुशाहिद, पोली, कल्लू आदि के नाम हैं।

राजनीति के चलते इसे जय श्रीराम के नारे से जोड़ने का प्रयास किया गया । ❑❑

उत्तर प्रदेश जनसंख्या नियंत्रण बिल—क्या है विवाद ?

—धर्मपाल आर्य

हाल ही में उत्तर प्रदेश की सरकार द्वारा राज्य में जनसंख्या नियंत्रण के लिए 'दो बच्चों की नीति' लागू किये जाने को लेकर बहस शुरू हो गई है। मसौदे में इस बात की सिफारिश की गई है कि 'दो बच्चों की नीति' का उल्लंघन करने वालों को स्थानीय निकाय के चुनाव में हिस्सा लेने की इजाजत नहीं हो। इसके अलावा उनके सरकारी नौकरी में आवेदन करने और प्रमोशन पाने पर रोक लगाई जाये। उन्हें सरकार की ओर से मिलने वाली किसी भी सब्सिडी का लाभ नहीं मिले। आयोग ने जो ड्राफ्ट तैयार किया है, उसे अपनी वेबसाइट पर अपलोड किया है और लोगों से कहा गया है कि वो 19 जुलाई तक इस पर अपनी राय रखें, अपने सुझाव भी दें।

ड्राफ्ट के मुताबिक, दो से ज्यादा बच्चे पैदा करने वाले लोग सरकार की कल्याणकारी योजनाओं से वंचित हो जायेगें। उनके परिवार को सिर्फ चार सदस्यों के हिस्से का राशन मिलेगा। अगर सरकार जरूरी समझे तो नियम का उल्लंघन करने वालों को दूसरी सरकारी योजनाओं से मिलने वाले लाभ भी खत्म कर सकती हैं। दो से अधिक बच्चे पैदा करने वाले लोग स्थानीय, निकाय और पंचायत चुनाव नहीं लड़ पाएंगे । वो सरकारी नौकरियों के लिए योग्य नहीं होंगे और सरकारी सब्सिडी का फायदा नहीं उठा पाएंगे ।

मसौदे में कहा गया है कि उत्तर प्रदेश में परिस्थिति की और आर्थिक संसाधनों की मौजूदगी सीमित है। सभी नागरिकों को मानव-जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं, जैसे भोजन, साफ पानी, अच्छा घर, गुणवत्ता वाली शिक्षा, जीवन यापन के अवसर और घर में बिजली मिलनी चाहिए। वैसे तो इसके दायरे में हर धर्म के लोग आएंगे, लेकिन जग जाहिर है कि मुस्लिम पर्सनल लॉ बहु-विवाह की इजाजत देता है। मसलन, एक शख्स की अगर दो पत्नियाँ हैं तो इस कानून के मुताबिक दोनों पत्नियों से इस परिवार में कुल दो बच्चे ही मान्य रहेंगे। दोनों पत्नियों से अगर दो-दो बच्चे हों, तो फिर उसे सरकारी सुविधाओं के लाभार्थी होने के नजरिये से गैर-कानूनी माना जायेगा, और परिवार सरकारी सुविधाओं के दायरे से बाहर हो जायेगा।

लेकिन इस ड्राप्ट पर कई सवाल खड़े हो रहे है क्योंकि जैसे ही सरकार ने जनसंख्या नियन्त्रण पर ड्राप्ट पेश करके सुझाव मांगे तो समाजवादी पार्टी के सांसद शफीकुर्रहमान बर्क सामने आये और कहा कि उत्तर प्रदेश जनसंख्या कानून बनाना सरकार के हाथ में है लेकिन जब बच्चा पैदा होगा तो उसे कौन रोक सकता है, इस दुनिया को अल्लाह ने बनाया है और जितनी रूहें अल्लाह ने पैदा की हैं, वो आनी हैं।

यानि बढती जनसंख्या की समस्या को समझने के बजाय अल्लाह की रूह और अल्लाह की देन बताकर अपना बयान मीडिया के स्टूडियो में फेंक दिया। परन्तु इसका जवाब दिया उत्तर प्रदेश सरकार के मंत्री मोहसिन रजा ने उन्होंने कहा कि 8 बच्चे होंगे तो पंक्चर ही बनाएँगे, हम तो इस बिल से मुसलमानों को टोपी से टाई तक लाना चाहते हैं।

वहीं सरकार ने प्रेस कांफ्रेंस में कहा कि समाज के विभिन्न तबकों को धयान में रखकर सरकार इस जनसंख्या नीति 2021 को लागू करने का काम कर रही है। उन्होंने कहा कि आबादी

को लेकर लोगों को जागरूक किया जाएगा। स्कूलों और अन्य जगहों पर भी इस बारे में लोगों को जागरूक करने की कोशिश की जाएगी। 2021 से 2030 के लिए प्रस्तावित नीति के माध्यम से परिवार नियोजन कार्यक्रम के बारे में भी लोगो को जागरूक किया जाएगा।

अब सरकार इसमें सुझाव मांग रही है तो इसमें पहला सुझाव ये भी हो सकता है कि अमूमन भारतीय समाज में नौकरी के बाद ही शादी होती है। यानि सरकारी नौकरी मिलने के बाद ही लोगों की शादी और बच्चे होते हैं, और एक बार सरकारी नौकरी मिल जाने और शादी हो जाने के बाद आपके कितने भी बच्चे हों दो हों या चार चाहें आप क्रिकेट टीम बना लीजिये क्या उसकी कोई जाँच या समीक्षा करने आएगा?

अब शायद यहाँ पर जवाब हो सकता है कि उन सरकारी कर्मचारियों को पदोन्नति नहीं मिलेगी। लेकिन इसमें भी एक झोल है कि ए.पी.एल. वाले यानि गरीबी रेखा से ऊपर जीवन जीने वाले जब थोड़े से भ्रष्टाचार का चूरन चटाकर गरीबी रेखा से नीचे वाला बी.पी.एल. कार्ड तक बनवा लेते हैं, फर्जी कोरोना नेगेटिव रिपोर्ट बनवा लेते हैं, फर्जी बैंक खाते खुलवा लेते हैं। तो ऐसे में फर्जी शपथ पत्र बनवाना कोई बड़ी बात नहीं, क्योंकि यहाँ तो बर्मा से भागे रोहिंग्या मुस्लिम भी आधार कार्ड लिए बैठे हैं ।

खैर इसमें दूसरा सवाल ये है कि अगर पूरे देश भर के केंद्रीय व राज्य कर्मचारियों को मिला दिया जाए तो मुश्किल से 10 प्रतिशत लोग इस दायरे में आ पाएंगे। शेष 90 प्रतिशत जो लोग निजी क्षेत्र और असंगठित क्षेत्र से जुड़े हैं, यानि पान की दुकान हो या रिक्शा रेहड़ी वाले या प्राइवेट नौकरी वाले उनका क्या होगा? ऐसे में सरकारी नौकरी में इस शर्त को जोड़कर 10 प्रतिशत लोगों के भरोसे जनसंख्या नियंत्रण करना आसान काम नहीं है।

यानि बिल को और भी प्रभावी बनाया जाये ताकि वो सभी पर लागू हो क्योंकि कुछ उदाहरण से अगर इसे जोड़कर देखा जाये तो अगस्त 2015 में माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद द्वारा आदेश दिया गया था कि सरकारी कर्मचारियों के बच्चे अनिवार्य रूप से सरकारी स्कूल में ही पढेंगे, अब आप अपने आसपास पता कर लीजिए कितने सरकारी कर्मचारियों के बच्चे सरकारी स्कूल में पढ़ते हैं? शायद ही कोई सामने आये तो माननीय उच्च न्यायालय के आदेश को क्या कहा जाये!

दूसरा कुछ समय पहले माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद द्वारा ही सभी धार्मिक स्थलों से ध्वनि विस्तारक यंत्रों के प्रयोग पर प्रतिबंध लगाया गया था। अब इस आदेश का कितना पालन हुआ, ये भी आप बखूबी जानते होंगे! पांच टाइम कानफोडू आवाज से कितनी राहत मिली लोग खुद जानते हैं। तीसरा जिस सरकारी नौकरी के नियम के आधार पर अब सरकार जनसंख्या नियंत्रण पर सुझाव मांग रही है उसमें मुस्लिम समुदाय की हिस्सेदारी करीब पाँच प्रतिशत से भी कम है। लेकिन जनसंख्या बढ़ाने में अन्य मतों–पन्थों के लोगों से कई गुना ज्यादा हिस्सेदारी लिए बैठी है यकीन ना हो तो 2011 के सरकारी आंकड़े उठाकर देख लें।

कहने का अर्थ ये है कि उत्तर प्रदेश कहो या देश भर में जिस रफ्तार से आबादी बढ़ रही है और आबादी पर जिस तरह के कंट्रोल की बात हो रही है तो उसे हासिल करने में सदियाँ बीत जाएंगी। इतना वक्त इंसान के पास नहीं है तो उत्तर प्रदेश सरकार के ड्राफ्ट का स्वागत है । लेकिन इसमें कुछ ऐसे प्रावधान भी जोड़े जायें, जिनके बल पर पूरी जागरूकता और ताकत के साथ आबादी कंट्रोल की जा सके। ❑❑

पूर्वमीमांसा के आधार पर दिए गए कुछ नैयायिक निर्णय

–उत्तरा नेरूर्कर, बंगलौर (मो०–९८४५०५८३१०)

पिछले मास मैंने महर्षि जैमिनिकृत पूर्वमीमांसा के कुछ सिद्धान्त दर्शाए थे, जिनके द्वारा वेद व इतर ग्रन्थों के अर्थ किए जाते हैं । प्रतिज्ञानुसार इस माह मैं मीमांसा पर आधारित कतिपय कठिन अभियोगों के निर्णयों का विवरण दे रही हूँ । ये सभी सर्वोच्च न्यायालय के प्रसिद्ध न्यायमूर्ति मार्कण्डेय काटजू की पुस्तक K. L. Sarkar's Mimansa Rules of Interpretation, Tagore Law Lecture Series–1905, ed. Justice Markandeya Katju, से उद्धृत हैं और उन्हीं के द्वारा निर्णीत हैं । काटजू जी मीमांसा के अच्छे जानकार रहे हैं, यह तो इन निर्णयों से स्पष्ट हो ही जाता है ।

१) उदय सिंह बनाम भारतीय जीवन बीमा निगम (एल०आइ०सी०)

१९७८ में यह निर्णय दिया गया । एक बार उदयसिंह अपने स्कूटर पर जा रहा था, जब उसकी ट्रक के साथ दुर्घटना हो गई । इसके कारण उसके दाएं पैर को काटना पड़ा और उसकी दाईं बाजू में लकवा हो गया । उदयसिंह ने एल० आइ० सी० से बीमा कर रखा था । पॉलिसी के अनुसार मृत्यु अथवा स्थायी अपंगता होने पर क्षतिपूर्ति के लिए धनराशि दी जानी थी । 'स्थायी अपंगता' के अन्तर्गत दोनों आंखों का जाना, या दोनों पैरों का कटना, या दोनों हाथों का कटना, अथवा एक हाथ और एक पैर का कटना निर्दिष्ट था । उदयसिंह का लकवापन यहाँ नहीं गिना गया था । इसलिए एल०आइ०सी० ने उसकी मांग अस्वीकार कर दी।

उदयसिंह ने अभियोग चलाया और सुनवाई इलाहाबाद उच्च न्यायालय तक पहुँची । वहाँ न्यायधीश काटजू ने कहा कि यहाँ **श्रुति सिद्धान्त** लगाना सही न होगा, अर्थात् जैसा लिखा है, उसे सीधे- सीधे वैसा ही पढ़ना न्याय न होगा । पॉलिसी की निर्दिष्ट दशाओं से स्पष्ट है कि वहाँ जीविकोपार्जन कर पाने में पूर्णतया बाधा से प्रयोजन है, अर्थात् यह उसका लक्षित अर्थ है । निर्दिष्ट दशाओं को केवल लिंग मानकर, उनका जो अन्तर्निहित तात्पर्य है, वह समझना आवश्यक है । हाथ या पैर के 'कट जाने' को अपंगता के रूप में पढ़ना चाहिए, न कि केवल 'कटने' के अर्थ में । इस प्रकार, **मीमांसा के लिंग सिद्धान्त** के अनुसार उन्होंने एल०आइ०सी० से उदयसिंह को उपयुक्त धनराशि देने को कहा । यह निर्णय अन्य किसी नियम से सम्भव न था, क्योंकि यह विषय न्याय-संहिता में नहीं पाया जाता ।

मीमांसा के भाष्यों में इसका उदाहरण प्राप्त होता है–**"काकेभ्यो दधि रक्षताम्"** अर्थात् कौओं से दही सुरक्षित करो । यहाँ केवल कौए ही नहीं, अपितु सभी जीव-जन्तुओं से दही बचाने का अर्थ समझना चाहिए, अर्थात् कौआ यहाँ उपलक्षण मात्र है । वैदिक साहित्य में यह एक बहुत लोकप्रिय सिद्धान्त है । पाणिनी ने अपने व्याकरण ग्रन्थ अष्टाध्यायी में भी इसका खुल के प्रयोग किया है, यथा–**यू स्त्र्याख्यो नदी (१।४।३)**–अर्थात् ईकारान्त व ऊकारान्त स्त्रीवाचक शब्दों की अष्टाध्यायी में 'नदी' संज्ञा होगी । यहाँ नदी स्वयं इस सूत्र के अन्तर्गत है । उसके समान सभी शब्दों का उपलक्षण के रूप में ग्रहण करके, उन सभी शब्दों की संज्ञा ही 'नदी' रख दी गई ।

वेदों में भी यह पद्धति यत्र-तत्र-सर्वत्र पाई

जाती है, यथा–पुँल्लिंग का प्रायः स्त्रीलिंग भी अर्थ समझना चाहिए, यथा–**यत् पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत....(यजुर्वेदः३१।१४)**– अर्थात् जो पुरुष–परमात्मा उनकी हवि का ग्रहण करता है, उसके द्वारा विद्वज्जन ध्यान–धारणा–समाधि रूप मानस–यज्ञ का विस्तार करते हैं । यहाँ 'देवाः' से केवल पुरुष साधकों का ग्रहण करना सही न होगा, विदुषी स्त्रियों का भी ग्रहण करना आवश्यक है ।

पुनः यह मन्त्र देखिए–**शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये.... (यजुर्वेदः ३६।१२)** –अर्थात् प्रकृतिक शक्तियाँ हमारे लिए इष्ट पदार्थों का सृजन करें और सब जल हमारे पीने के लिए कल्याणमय हों । यहाँ 'आपः' से जल ही नहीं, अपितु सभी भोग्य पदार्थों का ग्रहण करना चाहिए । इसी प्रकार, एकवचनात्मक प्राण व इन्द्रिय शब्दों से पांचों प्राण व पांचों इन्द्रियों का ग्रहण होता है । ऐसे अनन्त उदाहरण वेदों में मिल जायेंगे ।

२) सरदार मोहम्मद अनसार खान बनाम उत्तर प्रदेश सरकार

यह निर्णय इलाहाबाद उच्च न्यायालय में १९९२ में न्यायाधीश काटजू द्वारा दिया गया । यहाँ विवादित विषय था कि एक माध्यमिक विद्यालय के यदि दो लिपिक (क्लर्क) एक ही दिनांक को नियुक्त हुए हों, और यदि एक की ही पदोन्नति सम्भव हो, तो किसको वरिष्ठ माना जाएगा ? जो वरिष्ठ था, उसी को मुख्य लिपिक की पदवी मिलती थी, परन्तु वरिष्ठता नियुक्ति दिनांक से गिनी जाती है । अब इस विषय में न्याय–संहिता मूक थी । तो काटजू साहब ने पाया कि लिपिक तो नहीं, परन्तु अध्यापकों के विषय में एक अध्यादेश था–यदि दो अध्यापक एक दिनांक को नियुक्त हुए हों, और उनमें से केवल एक की पदोन्नति होनी हो, तो उनमें से जिसकी आयु अधिक हो, उसे वरिष्ठ माना जाएगा । **मीमांसा के अतिदेश नियम** का सहारा लेकर, काटजू जी ने निर्णय दिया कि जो नियम अध्यापकों के लिए है, वही लिपिकों के लिए भी लगना चाहिए, और दोनों लिपिकों में से जिसकी आयु अधिक होगी, उसे पदोन्नति प्राप्त हो । दोनों की आयु में तो भेद था ही इसलिए एक की उन्नति हो गई।

मीमांसा का अतिदेश नियम कहता है कि जहाँ कोई विधि न प्राप्त हो, तो अन्य समान विधि से उसको समझना चाहिए । उदाहरण के लिए, ब्राह्मणों में प्रकृति यागों का विस्तार से वर्णन है, जैसे कि दर्शपौर्णमास, परन्तु उनके विकृति यागों का नहीं, जैसे सौर्य याग। तो जिस ग्रन्थ में सौर्य याग का विवरण है, यदि वहाँ कुछ विधि कम दिखे तो उसे दर्शपौर्णमास (जिस प्रकृति यज्ञ का सौर्य यज्ञ विकृति है) की विधि से ग्रहण करना चाहिए ।

हिन्दू समाज के नियमों में पूर्व से ही इस अतिदेश सिद्धान्त का प्रयोग किया जाता रहा है, जैसे–दायभाग के विषय में औरस् पुत्र अर्थात् अपनी पत्नी से उत्पन्न सन्तान के लिए पूर्णतया निर्देश हैं, परन्तु दत्तक पुत्र के विषय में कुछ नहीं कहा गया । सो जो नियम औरस् सन्तान के दायभाग के लिए बताए गए थे, उन्हें ही दत्तक पुत्र के लिए भी घटाया जाए, ऐसा अतिदेश किया गया है ।

अधिदेशों में सर्वदा ही सभी स्थितियां नहीं कही जा सकतीं । यही वह सिद्धान्त है जिसके द्वारा एक से अनेक स्थितियों के नियम समझे जा सकते हैं ।

वेदों में यह सिद्धान्त इस प्रकार प्रयुक्त होता है–**सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् । सनिं मेधामयासिषँ स्वाहा (यजुर्वेदः ३२।१३)** –अर्थात् सभा का वह अद्भुत पति राजा का प्रिय व कामय होता है जिसकी बुद्धि सत्य और असत्य

में भेद कर सकती है । वैसी बुद्धि, हे परमात्मन्! आप मुझे प्रदान करें । जबकि यहाँ राजा की सभा के प्रसंग में स्पष्टतः 'सभापति' का ग्रहण किया गया है, तथापि सभी जनों को सदैव ऐसी बुद्धि की कामना करनी चाहिए । आगे के दो मन्त्रों में पुनः सब मनुष्यों द्वारा मेधा की कामना होने से यह अर्थ पुष्ट होता है ।

३) त्रिभुवन मिश्र बनाम जिला स्कूल निरीक्षक

पुनः यहाँ शैक्षिक संस्था का विवाद था । वह इस प्रकार था । माध्यमिक शिक्षा संस्था के प्रधानाध्यापक के सेवानिवृत्त हो जाने पर कौन अस्थायी रूप से भारनिर्वहन करे ? इस विषय पर एक खंडपीठ ने निर्णय दिया था कि सबसे वरिष्ठ अध्यापक अस्थायी प्रधानाध्यापक हो, जबकि दूसरी खंडपीठ ने कहा कि इस पद पर नियुक्त करने का अधिकार प्रबन्धन समिति का है । इन दो विरुद्ध निर्णयों में से किस निर्णय का पालन हो ? काटजू ने १९९२ में **मीमांसा के सामंजस्य सिद्धान्त** के अनुसार अपना निर्णय सुनाया– साधारणतः, वरिष्ठ अध्यापक को ही यह पद मिलना चाहिए, परन्तु विशिष्ट परिस्थितियों में, जैसे जब वरिष्ठ अधिकारी पर कुछ आरोप हों, तब प्रबन्ध समिति इस पद पर नियुक्त कर सकती है । इस प्रकार, दोनों ही पक्षों का इस निर्णय में सामंजस्य हो गया, किसी को भी नकारा नहीं गया।

मीमांसा का सामंजस्य सिद्धान्त ऐसी ही स्थितियों को निबटने के लिए है जहाँ दो वाक्यों में विरोध प्रतीत हो रहा हो । इस विषय को समझने के लिए व्याख्याकारों ने **नष्टाश्व-दग्धरथ** न्याय बताया है–दो प्रवासी अलग-अलग घोड़ागाड़ी से जा रहे थे । वे दोनों रात को एक सराय में रुके। सराय में आग लग गई । एक के घोड़े भाग गए और दूसरे का रथ जल गया । अब दोनों ही आगे जाने में असमर्थ ! तो उन्होंने एक दूसरे की सहायता की–एक के रथ में दूसरे के घोड़ों को जोत कर, उन्होंने अपनी यात्रा पूरी की ।

व्याख्याओं में यज्ञों के ऐसे प्रकरण बताए गए हैं, जहाँ एक ग्रन्थ एक विधि कहता है, दूसरा दूसरी । इस विरोध को दूर करने के लिए सामंजस्य सिद्धान्त ही एकमात्र आश्रय है, जो दोनों या अनेकों विधियों को साथ लेकर चलता है ।

वेदों में ऐसा विरोधाभास तो इतनी बार आता है कि बिना अर्थ का सामंजस्य किए हुए हम वेदों को दोषपूर्ण समझ कर त्याग ही दें ! यथा– **प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा वि जायते....(यजुर्वेदः ३१।१९)**–अर्थात् प्रजापति परमात्मा ब्रह्माण्ड रूपी गर्भ में, बिना जन्म लिए, अनेक प्रकार से जन्म लेता है । यहाँ 'जन्म' के दो पृथक् अर्थ करना आवश्यक है, नहीं तो वाक्य ही निरर्थक हो जाएगा । सो, सामंजस्य सिद्धान्त से अर्थ बना– प्रजापति स्वयं तो किसी शरीर से विशेष रूप से संयुक्त नहीं होता–'जन्म' नहीं लेता, परन्तु जड़ पदार्थों व चेतन जीव-जन्तु प्रजा के रूप में वह अपने अस्तित्व को 'प्रकट' करता है–'जन्म' लेता है ।

मन्त्र **तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके। तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः (यजुर्वेदः ४०।५)**–अर्थात् वह हिलता है, वह नहीं हिलता । वह दूर है, वह पास है । वह सबके अन्दर है, वह इस सब के बाहर है–यहाँ तो व्याघात ही व्याघात है ! इसी प्रकार परमेश्वर को कहीं 'क्रतु' और कहीं 'अक्रतु' पुकारा गया है। इन सभी स्थलों पर हमें सामंजस्य का प्रयोग करना चाहिए ।

जैसा कि उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है, इस सिद्धान्त का प्रयोग करने के लिए विशेष ज्ञान व बुद्धि की आवश्यकता है, लिंग व अतिदेश के

(शेष पृष्ठ २७ पर)

क्या घुसपैठियों ने बदले देश के समीकरण ?

–राजीव चौधरी (मो०–९५४००२९०४४)

जिस मिट्टी में देश की आजादी के लिए बलिदान के रंग का सुनहरा इतिहास छिपा है। जहां के लोगों के ज्ञान का रंग और जहां के लोगों ने साहित्य, खेल, कला और संस्कृति तथा जंगे–आजादी एवं ज्ञान–विज्ञान की आलोकित आभा से विश्व में अपनी अलग पहचान बनाई आज मां, माटी और मानुष की पहचान वाला वह बंगाल अपनी बदहाली पर पश्चाताप कर रहा है। यहां के 70 प्रतिशत बहुसंख्यक आत्मचिंतन और संघर्ष के भंवर में समाते चले जा रहे हैं और 30 प्रतिशत अल्पसंख्यक मानवता और नागरिकता की परिभाषा की उलटी गिनती लिख रहे हैं।

इस विषय पर पांचजन्य ने रिपोर्ट पेश की है कि इतिहास गवाह है, बांग्लादेश और पश्चिम बंगाल को मिलाकर पहले बंगाल हिन्दू बहुसंख्यक हुआ करता था। अब भारत में बच रहे हिंदू बहुल पश्चिम बंगाल का एक बहुत बड़ा हिस्सा, पड़ोसी बांग्लादेश के घुसपैठियों से आबाद होकर मिनी बांग्लादेश बन गया है, जहां मुस्लिम बहुसंख्यक हैं और हिन्दू मात्र 6 प्रतिशत बचे हैं। हालात ये हैं कि पश्चिम बंगाल में मुस्लिम आबादी 2001 में 25 प्रतिशत थी, जो 2011 में बढ़कर 27 प्रतिशत हो गई। वर्तमान में भारत–बांग्लादेश के सीमावर्ती इलाकों से कट्टरपंथियों द्वारा हिन्दुओं को भयभीत कर भगाए जाने की सूचनाएं आ रही हैं। इससे बांग्लादेश की सीमा से सटे पश्चिम बंगाल, बिहार और असम के अधिकतर क्षेत्रों का राजनीतिक व सांस्कृतिक परिदृश्य बदल गया है।

अविभाजित भारत के समय बंगाल में अल्पसंख्यक आबादी लगभग 30 प्रतिशत थी और विभाजन के बाद भारी संख्या में मुस्लिम बांग्लादेश में जा बसे, तब यहां अल्पसंख्यक आबादी काफी कम हो गई। मगर वर्तमान परिवेश की बात करें तो एक बार फिर से मुस्लिम समुदाय ने अपनी दमदार उपस्थिति दर्ज कराते हुए अपनी आबादी को दोबारा 30 प्रतिशत तक पहुंचा दिया है। यदि आंकड़ों की बात की जाए तो जिस तरह से बंगाल में मुस्लिम आबादी का विकास हो रहा है, इसके कई परिणाम निकल सकते हैं जो किसी भयावहता की ओर इशारा कर रहे हैं। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पिछले 10 वर्ष में जहां हिंदू समुदाय की आबादी 7 प्रतिशत तक बढ़ी है, वहीं मुस्लिम आबादी 8 प्रतिशत तक बढ़ी है।

प. बंगाल के 38,000 गांवों में 8000 गाँव अब इस स्थिति में हैं कि वहाँ एक भी हिन्दू नहीं रहता, या यूं कहना चाहिए कि उन्हें वहां से भगा दिया गया है। बंगाल के अल्पसंख्यक बहुल मुर्शिदाबाद, मालदा, उत्तर दिनाजपुर आदि जिलों में मुस्लिम आबादी का प्रतिशत 50 और इससे अधिक है जहां हिंदुओं को मुस्लिम दमनकारी नीतियों का सामना करना पड़ता है। इसमें मुर्शिदाबाद में 47 लाख मुस्लिम और 23 लाख हिन्दू, मालदा में 20 लाख मुस्लिम और 19 लाख हिन्दू, और उत्तरी दिनाजपुर में 15 लाख मुस्लिम और 14 लाख हिन्दू हैं। दमनकारी गतिविधियों से तंग आकर पिछले कई वर्ष से यहां पलायन का दौर जारी है। अपने आप को कमजोर पाकर यहां के हिंदू समुदाय के लोग पलायन को मजबूर हैं। वे अपना घर–बार और संपत्ति को संकट में डाल कर दूसरी जगह को आशियाना बना रहे हैं जिसका लाभ इन पर शासन करने वाले लोग कई मायने में उठा रहे हैं।

रोहिंग्या के मुद्दे पर भी इन क्षेत्रों में काफी

सुर्खियां बनी हुई हैं। पहले पड़ोसी मुल्क के लोगों ने यहां पांव जमाने के लिए भाईचारा और सद्भाव का सहारा लिया मगर अब वह बात नहीं है। कम आबादी वाली हिंदू क्षेत्रों में ये लोग जबरन प्रवेश कर उनकी जमीन और प्रमुख स्थलों को निशाना बनाकर उस पर अपना कब्जा जमा रहे हैं। बंगाल की सांस्कृतिक और भाषायी पहचान की खूबसूरती पर अब किसी और का कब्जा हो रहा है। इसकी सुधि लेने के लिए हिंदुओं को किसी मसीहा का इंतजार है। यहां बांग्लादेश की सीमा से सटे बंगाल के हिस्सों में आने वाले हिंदुओं को खदेड़ा जा रहा है। उनके घरों और मंदिरों पर कब्जा जमाया जा रहा है। मगर इस दर्द भरी दास्तान पर मरहम लगाने के लिए कोई उचित समाधान किसी के पास नहीं है।

मशहूर अमेरिकी पत्रकार जेनेट लेवी ने अपनी पुस्तक द मुस्लिम टेक ओवर ऑफ वेस्ट बंगाल में दावा किया है कि भारत का एक और विभाजन होगा और वह भी तलवार के दम पर। उन्होंने आशंका व्यक्त की है कि कश्मीर के बाद पश्चिम बंगाल में अब गृहयुद्ध होगा और अलग देश की माँग की जाएगी। बड़े पैमाने पर हिंदुओं का कत्लेआम होगा और मुगलिस्तान की मांग की जाएगी। उन्होंने यह भी दावा किया है कि यह सब ममता बनर्जी की सहमति से होगा। जेनेट लेवी ने कहा है कि 2013 में पहली बार बंगाल के कुछ कट्टरपंथी मौलानाओं ने अलग मुगलिस्तान की मांग शुरू की। इसी साल बंगाल में हुए दंगों में सैकड़ों हिंदुओं के घर और दुकानें लूट ली गईं और कई मंदिरों को भी तोड़ दिया गया। इन दंगों में सरकार द्वारा पुलिस को आदेश दिए गए कि वह दंगाइयों के खिलाफ कुछ ना करें।

जब हमारे सामने ये आंकड़े आते हैं कि राज्य के 46 विधानसभा क्षेत्रों में मुसलमान, आबादी का 50 प्रतिशत या उससे अधिक हैं, 16 विधानसभा क्षेत्रों में मुसलमान मतदाताओं का प्रतिशत 40 से 50 के बीच है और 33 क्षेत्रों में 30 से 40 के बीच, तो जेनेट लेवी की आशंका सच लगने लगती है। इन आंकड़ों से साफ है कि ठीक एक तिहाई सीटों पर मुसलमानों का समर्थन, किसी भी उम्मीदवार को विजय दिलवा सकता है। इसके अलावा जिन क्षेत्रों में मुस्लिम आबादी 20 से 30 प्रतिशत है, वहां भी जीत की चाभी उनके पास ही है। वहां वे अपने समर्थक उम्मीदवार के पक्ष में जा कर सरकार बनाने-बिगाड़ने के खेल में प्रमुख भूमिका निभाते हैं ।

पश्चिम बंगाल में पहले ईसाई मिशनरियों के चलते हिन्दू आबादी में बड़े पैमाने पर सेंधमारी हुई जिसके बाद मुस्लिम-वामपंथी गठजोड़ ने राज्य में हिन्दुओं के अस्तित्व को संकट में डाल दिया। हिन्दू संगठन और धार्मिक संस्थानों पर लगातर हमलों का इन राज्यों में लंबा इतिहास रहा है। आधुनिक भारत में इस तरह के सामाजिक परिवर्तन और राजनीतिक स्वार्थ के चलते हिन्दुओं में तनाव का बढ़ना चिंता का विषय है।

बंगाल की माटी में जन्मे संन्यासी शासक बल्लभ सेन, प्रोफेसर मेघनाद साहा, विवेकानंद, रवींद्र नाथ ठाकुर, चैतन्य महाप्रभु, रामकृष्ण परमहंस, सत्येंद्र नाथ बोस, अवनींद्र नाथ ठाकुर, आचार्य प्रफुल्ल चंद्र रॉय, श्यामा प्रसाद मुखर्जी, श्री अरविंद, बंकिम चंद्र चटर्जी, रमेश चंद्र मजूमदार, आशुतोष मुखर्जी जैसे महापुरुषों ने अपनी विचारधारा और सोच से समस्त संसार को प्रभावित किया। राष्ट्रधर्म और सामाजिक एकता की विचारधारा की जो परिभाषा उन्होंने वैश्विक स्तर पर फैलाई उसे पूरे विश्व ने स्वीकार किया। मगर आज के राजनीतिक ध्रुवीकरण और गैर जिम्मेदाराना विचार धाराओं ने सोनार बांग्ला की परिभाषा को मजबूत करने के बजाय झकझोर कर रख दिया है। इन महापुरुषों ने बंगाल के लिए जो सपने संजोए थे, उन सपनों का जनांकिकी के आधार पर विभाजन हो रहा है। बंगाल की सांस्कृतिक गौरवशाली विरासत की अमृत धारा की नदी सूखने लगी है। ❑❑

महर्षि दयानन्द की सही परिभाषा–

आध्यात्मिक क्रियात्मकता–"Spiritual Practicality"

–श्री अरविन्द घोष

इस महाशक्तिशाली पुनरुद्धारक और नव-निर्माता [महर्षि दयानन्द] का जन्म काठियावाड़ की भूमि में हुआ था । उस विशाल भूमि की प्रकृति का, उसकी आतमा का ही कुछ अंश इसकी आत्मा में प्रविष्ट हो गया था, गिरनार का, उसकी चट्टानों और पहाड़ का कुछ अंश, उस समुद्र की शक्ति और गर्जन का भी कुछ अंश जो घहराता हुआ इस प्रदेश के किनारों पर टकराता है । इसके साथ ही वहाँ की मानवता का भी कुछ अंश इसकी आत्मा में प्रविष्ट हो गया था । वहाँ की मानवता को प्रकृति-देवी ने अपने अकलुषित और विशुद्ध तत्त्व से बनाया दीखता है । वह शरीर से सुन्दर और बलिष्ठ है, नई-ताजी प्राणशक्ति से उज्जीवित है, अविकसित प्रकृतिवाले पुरुष में वह अपरिपक्व अवस्था में है पर जो विकसित प्रकृति वाले पुरुष में भव्य-निर्माण की महाशक्ति बनने की क्षमता रखती है ।

जब मैं दयानन्द के विषय में अपनी भावना को अपने सामने चित्रित करने की कोशिश करता हूँ और मुझ पर उसकी जो छाप पड़ी है उसे ठीक-ठीक रूप देने की चेष्टा करता हूँ तो प्रारम्भ में इस पुरुष के इसके जीवन और कार्य के दो महान्, सुस्पष्ट और विलक्षण गुण मेरे सामने आ खड़े होते हैं । वे गुण इसे अपने समकालीनों और साथियों से बिल्कुल अनूठा ही प्रदर्शित करते हैं । अन्य महान् भारतीयों ने अपने आपको जाति के आध्यात्मिक उपादान में उँडेलकर आज के भारत के बनाने में सहायता दी है । उन्होंने अनिश्चित स्वरूपवाले चलायमान द्रव्य में अपनी आध्यात्मिकता को ढाला । वह द्रव्य एक दिन स्थिररूप धारण करेगा और प्रकृति के एक महान् दृश्य जन्म के रूप में सामने आयेगा । उन्होंने एक प्रकार का खमीर डाल दिया, आकाररहित हलचल और संक्षोभ की एक शक्ति दे दी जिसमें आकारों का प्रकट होना आवश्यक था । वे ऐसी महान् आत्माओं और महाप्रभावशाली व्यक्तियों के रूप में स्मरण किये जायेंगे जो भारत की आत्मा में निवास करते हैं । वे हमारे अन्दर हैं और उनके बिना नि:संदेह हम वह न होते जो आज हम हैं। परन्तु किसी ठीक-ठीक आकार को लेकर यह नहीं कहा जा सकता है कि यह है जो उस मनुष्य का उद्देश्य था, यह कह सकना तो दूर रहा कि यह आकार ही उस आत्मा का ठीक मूर्त-रूप है।

इस विलक्षण कार्य के असली नमूने के तौर पर जो बृहत् और जटिल रचना के समय नितान्त आवश्यक होता है मेरे मन के सामने महादेव गोविन्द रानाडे का दृष्टान्त आ उपस्थित होता है। यदि कोई विदेशी हमसे पूछे कि इन महाराष्ट्रीय अर्थशास्त्री, सुधारक और देशभक्त ने वह कौन सा विशेष कार्य किया है जिसके कारण तुम उन्हें अपनी स्मृति में इतना स्थान देते हो तो हमें उत्तर देने में कुछ कठिनाई प्रतीत होगी । हमें एक विशेष मानव समुदाय के उन कार्यों की तरफ संकेत करना पड़ेगा जिनमें रानाडे की आत्मा और विचार एक अमूर्त निर्माता के रूप में विद्यमान हैं, हमें आज के भारत के उन महान् व्यक्तियों की तरफ इशारा करना पड़ेगा जिन्होंने इनकी आत्मा में आये प्राण को ग्रहण किया है और अन्त में हमें पूर्वोक्त

प्रश्न का उत्तर इस प्रश्न के रूप में ही देना होगा, "भला, महादेव गोविन्द रानाडे के बिना आज का महाराष्ट्र क्या होता और महाराष्ट्र के बिना आज का भारत ही क्या होता? परन्तु जो महान् व्यक्ति, वस्तुओं और मनुष्यों पर प्रभाव डालने में इन जैसे आकाररहित नहीं थे और जो प्रसरणशील भी थे उनके विषय में तथा उन कार्यकर्ताओं के विषय में भी जिनकी शक्ति और कार्य अधिक स्पष्ट थे, मेरे मन पर मूलतः यही छाप पड़ती है ।

यदि शक्ति की कोई आत्मा हो सकती है तो विवेकानन्द शक्ति की आत्मा ही थे, वे मनुष्यों के बीच साक्षात् सिंह थे, पर जो कुछ निश्चित कार्य वे पीछे छोड़ गये हैं वह उनकी तुलना में बहुत ही कम हैं जिसकी छाप उनकी रचना करने की शक्ति और सामर्थ्य के बल पर हमारे ऊपर पड़ी हुई है । हम उनके प्रभाव को अब भी बहुत बड़ी मात्रा में काम करता हुआ अनुभव करते हैं हम अच्छी तरह नहीं जानते कि कैसे और कहाँ किन्तु किसी वस्तु में जो अभी तक आकार में नहीं आई, कुछ सिंह सदृश महान् अन्तः प्रेरक ऊपर उठाने वाला प्रभाव अनुभूत होता है जो भारत की आत्मा में प्रविष्ट हो गया है और हम कहते हैं, "देखो, विवेकानन्द अपनी माता की आत्मा में, उनके पुत्रों की आत्माओं में अभी तक जीवित है ।" यही बात सब महापुरुषों के विषय में है। न केवल ये पुरुष अपने निर्धारित कार्यों की अपेक्षा अधिक महान् थे, किन्तु इनका प्रभाव भी इतना विस्तृत और अगोचर था कि जो कोई ठोस कार्य ये अपने पीछे छोड़ गये हैं उसके साथ इसका कोई विशेष सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जा सकता ।

महर्षि दयानन्द की कर्मशैली बिल्कुल भिन्न थी । वे ऐसे मानव थे जिन्होंने अपने आपको वस्तुओं की अनिर्धारित आत्मा में आकाररहित तौर पर नहीं उठेला था बल्कि वस्तुओं और मनुष्यों पर अपनी आकृति की ऐसी अमिट छाप लगा दी थी जैसे पीतल में मुहर लगा दी हो । वे ऐसे पुरुष थे जिनके साकार कार्य उनके आत्मिक शरीर से जन्मे उनके पुत्र ही थे, सुन्दर और बलिष्ठ तथा प्राण से परिपूर्ण, अपने जन्मदाता की हूबहू प्रतिच्छवि । वे ऐसे व्यक्ति थे जो निश्चित तौर पर और साफ-साफ जानते थे कि उन्हें क्या कार्य करने के लिए यहाँ भेजा गया है । उन्होंने आत्मा की प्रभुत्वपूर्ण दृष्टि से अपनी साधन-सामग्री का चुनाव और कार्य अवस्थाओं का निर्धारण किया और फिर अपने संकल्पित विचार को जन्मसिद्ध कार्यकर्त्ता की प्रबल, सिद्धहस्त दक्षता के साथ कार्यरूप में परिणत किया । जब मैं परमेश्वर के कारखाने के इस दुर्दम कारीगर की मूर्ति का ध्यान करता हूँ तो मेरे सामने झुण्ड के झुण्ड चित्र आने लगते हैं जो सब के सब संग्राम के, कर्म के, विजय के, सफलतापूर्ण प्रयास के चित्र होते हैं। तब मैं अपने आप को कहता हूँ यह है दिव्य-प्रकाश का सैनिक, परमेश्वर के जगत् का योद्धा, मनुष्यों और संस्थाओं को बनाने वाला शिल्पकार और प्रकृति आत्मा के सम्मुख जो कठिनाइयाँ उपस्थित करती है उनका निर्भीक और अदम्य विजेता । यदि साररूप में कहूं तो इस सब की जो जबर्दस्त छाप मुझ पर पड़ती है वह है आध्यात्मिक क्रियात्मकता की । **आध्यात्मिक और क्रियात्मकता ये दो शब्द आमतौर पर हमारी परिकल्पनाओं में एक-दूसरे से अत्यन्त विपरीत समझे जाते हैं । इन दोनों शब्दों को मिलाकर प्रयुक्त करना मुझे महर्षि दयानन्द की सही परिभाषा प्रतीत होती है।**

[स्रोत : Vedic Magazine में 1915 में प्रकाशित Dayanand : The Man and his work, निबंध का पंडित जगन्नाथ वेदालंकार द्वारा किया गया हिन्दी अनुवाद]

प्रस्तुतकर्ता : भावेश मेरजा

❑❑

॥ ओ३म् ॥

देशभक्त या आतंकवादी

—राजेशार्य आट्टा पानीपत-१३२१२२, (मो०: ०९९९११२९१३१८)

[गतांक से आगे.....]

यह सोचना नितान्त-अकल्पनीय और अग्राह्य है कि आप अब भी इस बात की क्षीण आशा रखने का साहस करते हैं कि इंग्लैण्ड अपनी स्वतन्त्र इच्छा से उदार और न्यायपूर्ण हो सकता है...। यह इंग्लैण्ड, जो जलियाँवाला बाग के नर-संहार को आत्मरक्षा का एक न्यायसम्मत साधन मानने में विश्वास रखता है । यह इंग्लैण्ड, जिसने ओडायर-नायर केस की सुनवाई की और बर्बरता के पक्ष में फैसला सुनाया । यदि आपके अन्दर ब्रिटिश सरकार की सद्भावना के प्रति लेशमात्र भी आस्था विद्यमान है, तब फिर आप के अनुसार किसी प्रकार के प्रोग्राम की आवश्यकता ही क्या है ? यदि ब्रिटिश सरकार को होश में लाने के लिए किसी प्रकार के आन्दोलन की कोई भी आवश्यकता है, तो फिर ब्रिटिश सरकार की ईमानदारी और नेकनीयती का बखान क्यों ?

ऐसा प्रतीत होता है कि आपके अन्दर का देवदूत तो विदा हो चुका है और आप एक बार फिर एक वकील बनकर एक कमजोर केस की पैरवी कर रहे हैं या शायद आप हमेशा ही केवल अर्द्धसत्य के हिमायती—एक प्रबल हिमायती रहे हैं । एक सर्वसत्ताधारी, स्वतन्त्र भारतीय गणराज्य का संसार के अन्य स्वतन्त्र राष्ट्रों के साथ संश्रितया संघबद्ध होना एक बात है और इस साम्राज्यवादी ब्रिटिश साम्राजय के अन्तर्गत स्वशासी भारत का होना बिल्कुल दूसरी बात है।

आपकी ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत बने रहने की लालसा कितनी ही हिमालय जैसी बड़ी भूल की याद दिलाती है, जैसे कि आपने एक सुमान्य आदर्श का एक झूठी कार्य-साधकता की वर्त्तमान आवश्यकताओं के साथ ताल-मेल बैठाया और यही कारण है कि आप देश के नौजवानों की मनोभावानाओं और आकांक्षाओं को वशीभूत करने में असफल रहे । वे नौजवान, जो साहस कर सकते हैं और आज भी आपकी इच्छाओं के विरुद्ध जाने का साहस कर रहे हैं, हालांकि वे बिना किसी हिचकिचाहट के आपको वर्त्तमान युग की एक महानतम विभूति के रूप में स्वीकार करते हैं । यह है भारतीय क्रान्तिकारी। उन्होंने निश्चय कर लिया है कि अब वे और अधिक खामोश नहीं रहेंगे और इसलिए वे आपसे प्रार्थना करते हैं कि आप राजनीतिक क्षेत्र से संन्यास ग्रहण कर लें, या फिर राजनीतिक आन्दोलन का सञ्चालन इस ढंग से करें कि वह क्रान्तिकारी आन्दोलन के मार्ग में बाधक न बन कर सहायक बन सकें ।

इतने दिनों तक केवल आपके प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष अनुरोध का पालन करने के लिए उन्होंने अपने क्रियाकलाप को स्थगित रखा और उन्होंने इससे भी अधिक किया । उन्होंने अपनी पूरी शक्ति लगाकर आपके प्रोग्राम के क्रियान्वयन में वस्तुतः आपकी सहायता की । परन्तु अब यह प्रयोग समाप्त हो गया है और इसलिए क्रान्तिकारी अपने किए हुए वादे से मुक्त हैं । वास्तव में उन्होंने केवल एक साल तक चुप रहने का वादा किया था, इससे अधिक नहीं ।

इसके अतिरिक्त मैं आपको बताना चाहूँगा कि आपने क्रान्तिकारियों को अनेक विषयों में गलत समझा है । जब उन्तालीसवीं कांग्रेस में अपने हाल के अध्यक्षीय भाषण में आपने उन्हें दोषी ठहराया । आपने कहा कि क्रान्तिकारी भारत की प्रगति के मार्ग में अवरोध उत्पन्न कर रहे हैं। मैं नहीं जानता हूँ कि आपका इस 'प्रगति' शब्द से क्या तातपर्य है ? यदि आपका आशय राजनीतिक प्रगति से है, तो क्या आप इस बात से इनकार कर सकते हैं कि भारत ने अब तक जो भी राजनीतिक प्रगति की है, वह कितनी ही कम क्यों न हो, मुख्यत: क्रान्तिकारी पार्टी के प्रयासों और बलिदानों के द्वारा ही हुई ?

क्या आप इस तथ्य को अस्वीकार कर सकते हैं कि बंगाल के क्रान्तिकारियों के प्रयत्नों के फलस्वरूप बंगाल के विभाजन को रोका गया था ? क्या आप इस बारे में सन्देह कर सकते हैं कि मार्ले-मिण्टो सुधार भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन का नतीजा था, जो पूर्णत: नहीं तो मुख्यत: माण्टफोर्ड सुधार लाने में प्रेरक था ? मुझे इस बात से अधिक आश्चर्य नहीं होगा यदि आप इन प्रश्नों का सकारात्मक उत्तर देंगे, परन्तु मैं आपको इस बात का विश्वास दिला सकता हूँ कि ब्रिटिश सरकार इस आन्दोलन की प्राणवत्ता से अवगत है। स्वर्गीय श्री माण्टेग्यू तक ने एक प्रतिष्ठित भारतीय उच्चाधिकारी से अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था कि उन्होंने केवल भारत के युवा क्रान्तिकारियों के क्रियाकलाप के कारण ही अपने प्राणों को संकट में डाल कर भारत में आने का कष्ट किया ।

यदि आपका मतलब है कि यह सुधार सच्ची प्रगति के सूचक नहीं है, तो मैं यह कहने का साहस करूँगा कि क्रान्तिकारी आन्दोलन ने भारत के नैतिक उत्कर्ष की दिशा में कुछ कम प्रगति नहीं की है । भारतीयों में मृत्यु का भय बुरी तरह समाया हुआ था और इस क्रान्तिकारी पार्टी ने एक बार फिर उस सौन्दर्य और महानता से भारतीयों को परिचित कराया, जो किसी गरिमामय उद्देश्य के लिए प्राणों का उत्सर्ग करने में होता है ।

क्रान्तिकारियों ने एक बार फिर दिखा दिया कि मृत्यु में एक सुखद सम्मोहन होता है और वह हमेशा एक भयावनी वस्तु नहीं होती है । अपने विश्वासों और धारणाओं के लिए मरना, इस आत्मबोध के साथ मरना कि ऐसा करने से व्यक्ति ईश्वर की और राष्ट्र की सेवा कर रहा है, एक ऐसे सदुद्देश्य के लिए, जिसके ठीक और न्यायोचित होने में व्यक्ति ईमानदारी से विश्वास रखता हो, मृत्यु को अंगीकार करना या फिर मृत्यु की पूरी सम्भावना होते हुए भी अपने प्राणों को संकट में डालना—क्या यह नैतिक उत्कर्ष नहीं है?

विपत्तियों और अस्थायी असफलताओं तक में अपने प्रिय आदर्श पर जमे रहना—क्षणिक उत्तेजनाओं से विचलित न होना और किसी लुभावने व्यक्तित्व के भव्य प्रतीत होनेवाले सिद्धान्तों से चलायमान न होना, कठोर, परिश्रम सहित लम्बी-लम्बी सजाओं से भयाक्रान्त न होना, लगातार अपनी अन्तरात्मा के प्रति सच्चा बना रहना, क्या उद्देश्य की यह दृढ़ता और चरित्र की यह सबलता भारत की सच्ची नैतिक प्रगति की सूचक नहीं है ? और यह क्रान्तिकारी आदर्शों की प्रत्यक्ष उपलब्धि नहीं है ?

आपने क्रान्तिकारियों से कहा है, 'तुम अपने जीवन की भले ही परवाह न करो, परन्तु अपने उन देशवासियों की, जो एक शहीद की मौत नहीं मरना चाहते हैं, की उपेक्षा करने का साहस तुम्हें नहीं करना है । परन्तु खेद है कि क्रान्तिकारी आपके इस वाक्य का अर्थ समझने में असमर्थ हैं । क्या आपके कहने का आशय यह है कि उन सत्तर मनुष्यों की मृत्यु के लिए क्रान्तिकारी उत्तरदायी हैं, जिन्हें चौरीचौरा काण्ड की सुनवाई

में प्राणदण्ड दिया गया था ? क्या आप यह कहना चाहते हैं कि जलियाँवाला बाग और गुजरानवाला में निर्दोष व्यक्तियों पर गोलाबारी और नरसंहार के लिए क्रान्तिकारी उत्तरदायी हैं ?

क्या क्रान्तिकारियों ने अपने अतीत और वर्त्तमान के गत बीस वर्षों के संघर्ष-काल में भूख से मरते हुए लाखों लोगों से कभी क्रान्तिकारी आन्दोलन में भाग लेने के लिए कहा है ? आजकल के अधिकांश नेताओं की तुलना में क्रान्तिकारी शायद जन-मनोविज्ञान का अपेक्षाकृत श्रेष्ठ ज्ञान रखते हैं, और यही कारण था कि अपनी शक्ति से आश्वास्त हुए बिना उन्होंने कभी आम जनता से काम नहीं लेना चाहा । उन्होंने हमेशा यह माना कि उत्तर भारत की आम जनता किसी भी आपात स्थिति के लिए तैयार थी और उनका यह विचार भी ठीक था कि उत्तर भारत की जनता एक सघन एवं शक्तिशाली विस्फोटक तत्त्व-स्वरूप है, जिसमें लापरवाही से हाथ लगाना खतरनाक है ।

यह तो आप और आपके लेफ्टीनेंट थे, जिन्होंने जनता के मनोभावों को समझने में भूल की और उन्हें सत्याग्रह आनदोलन में घसीट लिया –वे लोग, जो आन्तरिक और बाह्य हजारों अत्याचारों के नीचे दबे हुए कराह रहे थे, जहाँ क्रोध की बिजली अदृश्य रूप से विद्यमान थी– और आपको इसका हर्जाना देना पड़ा । परन्तु क्या आप कोई ऐसा उदाहरण प्रस्तुत कर सकते हैं, जहाँ क्रान्तिकारियों ने अनिच्छुक आत्माओं को मौत की घाटी में घसीटा हो ।

परन्तु यदि आपके वाक्य का आशय यह है कि क्रान्तिकारियों के क्रियाकलापों के फलस्वरूप निर्दोष व्यक्ति सताये जा रहे हैं, जेलों में डाले जा रहे हैं और मौत के घाट उतारे जा रहे हैं, तो मैं बिना झिझक के और ईमानदारी के साथ इसे स्वीकार करता हूँ । जहाँ तक मेरी जानकारी है, किसी एक व्यक्ति को भी फांसी नहीं दी गयी, जो क्रान्तिकारी क्रियाकलाप की दृष्टि से निर्दोष हो और जेलों और यातनाओं के सम्बन्ध में मैं कह सकता हूँ कि बहुत से निर्दोष व्यक्तियों को सचमुच सताया गया और यातनाएं दी गयीं ? परन्तु क्या एक विदेशी सरकार द्वारा की गयी क्रूरताओं के लिए क्रान्तिकारी पार्टी को उत्तरदायी ठहराया जा सकता है ?

विदेशी सरकार राष्ट्र में पौरुष की अभिव्यक्ति, चाहे किसी भी रूप में हो, कुचलने के लिए कृत संकल्प है, और ऐसा करने में सरकार द्वारा भारी भूलें होना भी सम्भावित है और वीरों के साथ-साथ कायरों को सताना, जेल भेजना और यातनाएं देना भी सम्भावित है, परन्तु क्या वीर पुरुषों को कायरों के दु:खभोग के लिए दोषी ठहराया जा सकता है ? पर, इस दु:खभोग को शहीद की मौत की संज्ञा नहीं प्रदान की जा सकती है ।

अन्त में ब्रिटिश साम्राज्य की शक्ति के बारे में आपके द्वारा कही गयी बातों के सम्बन्ध में मैं कुछ कहना चाहूँगा । आपने क्रान्तिकारियों से कहा है, "वे, जिन्हें तुम राज्याधिकार से हटाना चाहते हो, तुम्हारी अपेक्षा कहीं अधिक हथियारबन्द और अत्यधिक सुसंगठित हैं ।" परन्तु शर्म की बात नहीं है कि मुट्ठी भर अंग्रेज, भारत के लोगों की स्वतन्त्र इच्छा से नहीं, बल्कि तलवार के जोर से भारत पर शासन करने में समर्थ हैं ? और यदि अंग्रेज अच्छी तरह हथियारबन्द और अच्छी तरह संगठित हो सकते हैं, तो फिर भारतीय उससे भी अधिक हथियारबन्द और उससे भी अधिक सुसंगठित क्यों नहीं हो सकते ?

भारतीय जो आध्यात्मिकता के उच्च सिद्धान्तों से ओत-प्रोत हैं, भारतीय मनुष्य हैं, ठीक वैसे ही जैसे अंग्रेज हैं । तब इस पृथ्वी पर ऐसा क्या है, जो भारतीयों को इतना असहाय बना देता है कि वे यह सोचने लगते हैं कि वे कभी अपने अंग्रेज

(शेष पृष्ठ २७ पर)

॥ ओ३म् ॥

मनुष्य की ही तरह पशु-पक्षियों को भी जीने का अधिकार है

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून (मो० : ०९४१२९८५१२१)

परमात्मा ने संसार में जीवात्माओं के कर्मों के अनुसार अनेक प्राणी-योनियों को बनाया है । हमने अपने पिछले जन्म में आधे से अधिक शुभ व पुण्य कर्म किये थे, इसलिये ईश्वर की व्यवस्था से इस जन्म में हमें मनुष्य जन्म मिला है। जिन जीवात्माओं के हमसे अधिक अच्छे कर्म थे, उन्हें अच्छे माता-पिता व परिवार मिले और जिनके पुण्य कर्म पचास प्रतिशत की सीमा पर व उससे कुछ अधिक थे उन्हें बहुत अच्छा पारिवारिक वातावरण एवं अन्य सुख-सुविधायें नहीं मिलीं। बहुत सी जीवात्मायें ऐसी थीं जिनके पुण्य कर्म कम और पाप कर्म अधिक थे। उन आत्माओं को परमात्मा ने मनुष्य से निम्न पशु, पक्षी एवं अन्य थल, जल व नभचर योनियों में उत्पन्न किया है। मनुष्येतर योनियाँ भी मनुष्यों की ही तरह अपने-अपने पूर्वजन्मों के पुण्य व पाप कर्मों का फल भोग रही हैं। जिस प्रकार से मनुष्यों को यह अधिकार प्राप्त है कि वह अपने निजी जीवन में स्वतन्त्रतापूर्वक निर्भय होकर अपनी इच्छानुसार शुभाशुभ कर्म कर सकते हैं, उसी प्रकार से अन्य योनियों के प्राणियों को भी परमात्मा ने यह अधिकार दिया है कि वह भी अपने-अपने कर्मों का भोग कर आयु पूरी करें और उनके जो भोग कम हो जायें, उसके बाद बचे हुए शेष कर्मों के आधार पर परमात्मा की व्यवस्था से उनका किसी अन्य उपयुक्त योनि में पुनः जन्म हो ।

वैदिक मान्यता है कि कर्मफल के अनुसार मनुष्य का सभी प्राणी योनियों में से किसी भी योनि में जन्म हो सकता है और अन्य योनियों के प्राणी भी अपने कर्म फलों का भोग कर फिर मनुष्य व अन्य योनियों में ईश्वर की व्यवस्था से जन्म प्राप्त करते हैं। अतः मनुष्य को ईश्वर से ज्ञान व विवेक के साधन प्राप्त होने के कारण सत्य व ईश्वर ज्ञान वेदों से प्रेरणा ग्रहण कर सद्कर्म ही करने चाहिये और किसी प्राणी के कर्मफल भोग में बाधक न बनकर साधक ही बनना चाहिये। ऐसा करके मनुष्य के पुण्य कर्मों में वृद्धि होगी जिसका परिणाम इस जन्म सहित पर जन्म में सुख व कल्याण की प्राप्ति होगी। जो मनुष्य ऐसा करते हैं वह सौभाग्यशाली हैं और जो नहीं करते वह हतभाग्य व मूर्ख कहे जा सकते हैं। किसी पशु को अकारण दुःख व कष्ट देना, उनकी हत्या करना व करवाना तथा उनके मांस का भोजन रूप में सेवन करना ईश्वर से मनुष्य को प्राप्त ज्ञान वा बुद्धि का अपमान है और इसका दण्ड परमात्मा कर्मों के परिपक्व हो जाने पर इस जन्म के उत्तर भाग व परजन्म में अवश्य देता है। इन प्रश्नों को विचार कर मनुष्य को अशुभ व पाप कर्मों के प्रतिदिन त्याग करने में तत्पर रहना चाहिये। जो बन्धु माँसाहार करते हैं, उन्हें आज व इसी समय से इसका त्याग कर देना चाहिये अन्यथा इस कारण

से उन्हें अपने भावी जीवन में भारी हानि उठानी पड़ेगी, यह वैदिक सिद्धान्तों के आधार पर सुनिश्चित है। कुछ बन्धु यह प्रश्न भी करते हैं कि बहुत से पापी व भ्रष्टाचारी इस जन्म में सुखी देखे जाते हैं, ईश्वर उन्हें दण्ड क्यों नहीं देता? इसका उत्तर हमें निकृष्ट पशु आदि योनियों में जन्म लेने वाली जीवात्माओं को देखकर हो जाता है। वर्तमान के पापी लोगों को परमात्मा अगले जन्म में नीच योनि में जन्म देकर दण्ड देता है। इस जन्म में हम अपने पूर्वजन्मों की अर्जित पूंजी को ही प्रायः खर्च करते हैं। इस जन्म में हम जो कर्मों की पूंजी, पाप व पुण्य, जमा करेंगे उसको अगले जन्म में खर्च करेंगे, ऐसा अनुमान होता है।

महर्षि दयानन्द ने जहाँ वेदों का पुनरुद्धार किया वहीं उन्होंने यह भी बताया कि जीवात्मा चेतन होने के कारण ज्ञान व कर्म की शक्तियों एवं गुणों से युक्त है। ईश्वर नित्य व सर्वव्यापक होने सहित स्वभावतः सर्वज्ञ है वहीं जीवात्मा एकदेशी व ससीम होने से अल्पज्ञ है। जीवात्मा वेदों के अध्ययन एवं ईश्वर की उपासना सहित चिन्तन व मनन से अपना ज्ञान तो बढ़ा सकता है परन्तु यह कभी सर्वज्ञ नहीं हो सकता। मनुष्य सभी विषयों में सत्यासत्य का निर्णय भी नहीं कर सकता। इसी कारण से धर्म, परमात्मा एवं जीवात्मा सहित मनुष्य के कर्तव्य एवं अकर्तव्यों से सम्बन्धित सत्य व असत्य के निर्णय में परमात्मा का दिया हुआ ज्ञान वेद परम प्रमाण माना जाता है। इस तथ्य को जान लेने व स्वीकार कर लेने पर मनुष्य का जीवन वास्तविक रूप में मनुष्य का जीवन बनता है अन्यथा वह एकांगी एवं सत्य एवं असत्य मान्यताओं से युक्त जीवन व्यतीत करने को बाध्य होता है। आर्यसमाज की स्थापना भी ऋषि दयानन्द ने लोगों तक वेद के सत्य सन्देशों को पहुँचाने के लिये ही की थी। आर्यसमाज की जो विविध गतिविधियाँ चलाई जाती हैं, उसके केन्द्र में विश्व के सभी लोगों तक वेदों का सत्य स्वरूप व उसकी शिक्षाओं को प्रचारित करना व उन्हें स्वीकार कराना भी उद्देश्य है। ऐसा करके ही संसार से मनुष्यों की अविद्या दूर होकर सभी प्राणियों को सुख की प्राप्ति हो सकती है। आज भी आर्य समाज इसी कार्य को विभिन्न रूपों में कर रहा है ।

यह संसार अपौरुषेय है जिसे परमात्मा ने बनाया है और वही इसका संचालन कर रहा है। वही परमात्मा जीवात्माओं के पुण्य व पाप कर्मों का फल प्रदाता है। सभी जीवों का वास्तविक न्यायाधीश परमात्मा ही है। वह सर्वव्यापक एवं सर्वान्तर्यामी होने से ब्रह्माण्ड के समस्त जीवों के सभी कर्मों का साक्षी होता है। वह दूसरों की साक्षी लेकर न्याय नहीं करता अपितु अपने सत्य व प्रत्यक्ष ज्ञान के आधार पर, जीवों के प्रत्येक कर्मों का साक्षी होकर, उन्हें उनके प्रत्येक कर्म का उचित मात्रा में, पक्षपात रहित होकर अपने यथा तथ्य ज्ञान व विधि विधान से सुख व दुःख रूपी फल देता है। मनुष्य को ईश्वर के कर्मफल विधान को समझना चाहिये और सत्य के ग्रहण करने तथा असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये। ऐसा करके ही उसका मनुष्य जीवन सार्थक हो सकता है। मनुष्य को अपने मार्गदर्शन के लिये वेद, उपनिषद, दर्शन, मनुस्मृति सहित सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय एवं वैदिक विद्वानों के वेदानुकूल ग्रन्थों का अधययन करना चाहिये। ऐसा करके वह ईश्वर व जीवात्मा के सत्यस्वरूप सहित अपने कर्तव्यों का बोध प्राप्त कर सकते हैं। ईश्वरोपासना, अग्निहोत्र, पितृयज्ञ आदि के महत्व एवं लाभों का भी उन्हें इससे बोध होता है।

वैदिक धर्म में समस्त धर्म-कर्म कार्यों का उद्देश्य आत्मा की उन्नति सहित धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति है। वेदाध्ययन करने से हमें यथार्थ मनुष्य धर्म का बोध होता है। वैदिक आचरणों व कर्मों से हम अर्थ व जीवन जीने के लिये आवश्यक साधनों को प्राप्त करते हैं। धर्मपूर्वक अर्थ प्राप्ति से हम अपनी मर्यादित आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए सुख देने वाले कार्यों का करते हैं। इसके साथ ही उपासना वा ईश्वर के ध्यान को करते हुए समाधि की अवस्था को प्राप्त होकर ईश्वर साक्षात्कार करना मनुष्य जीवन का उद्देश्य है जो मोक्ष प्राप्ति का कारण बनता है। बिना ईश्वर साक्षात्कार के किसी मनुष्य, योगी, महात्मा, महापुरुष व सन्त आदि को मोक्ष प्राप्त नही हो सकता। ईश्वर का साक्षात्कार भी बिना समाधि अवस्था को प्राप्त किये मनुष्य को नहीं होता। समाधि की प्राप्ति अष्टांग योग के बिना सम्भव नहीं है। **अतः मनुष्य धर्म में अष्टांग योग का सेवन व व्यवहार करने का सर्वोपरि महत्व है।** अष्टांग योग से रहित धर्म व मत सार्थक न होने से मनुष्य को उसके लक्ष्य मोक्ष पर कभी नहीं पहुँचा सकते। अतः सुख, आनन्द व मोक्ष की प्राप्ति के लिये मनुष्य को वैदिक धर्म एवं योग की शरण में आना ही होगा ।

अष्टांग-योग को जानने व आचरण करने वाला मनुष्य पूर्ण अहिंसक बन जाता है और वह सभी प्राणियों जिनमें सभी पशु एवं पक्षी आदि योनियाँ सम्मिलित हैं, उन्हें अपनी मित्र की दृष्टि से देखता और व्यवहार करता है। ऐसा मनुष्य अहिंसक होने के साथ सभी प्राणियों को जीवन में अभय प्रदान कर उनके सुखों की वृद्धि करता है। इतिहास में ऐसे उदाहरण देखे जाते हैं कि हिंसक पशु सिंह आदि भी अहिंसक मनुष्यों के प्रति अपनी हिंसा की प्रवृत्ति का त्याग कर देते हैं। हमने ऐसी आश्चर्यजनक यथार्थ वीडियो देखी हैं जिनमें हिंसक शेर आदि पशु मनुष्यों का आलिंगन कर रहे हैं। यह उन मनुष्यों के पशु-प्रेम व उसमें सफलता का उदाहरण कह सकते हैं। ऐसा ही एक वीडियों हमें किसी ने भेजा है जिसमें एक परिवार में पशु हत्या की जा रही है। उस परिवार में २ से ५ वर्ष के कई बच्चे हैं। वह बच्चे उन पशुओं की प्राण रक्षा के लिये रो-रोकर उस पशु को न मारने के लिये कह रहे हैं। यह ऐसा मार्मिक वीडियों है कि जिसे हम पूरा देख भी नहीं सके। अतः हमें पशुओं से प्रेम करना सीखना होगा। वेद में कहा गया है कि मैं सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखता हूँ । यजुर्वेद में कहा गया है कि जो सब प्राणियों में स्वयं की आत्मा को और अपनी आत्मा में सब प्राणियों की आत्मा को समभाव रखकर देखता है उसका मोह, शोक एवं दुःख दूर हो जाते हैं। अतः हमें सच्चा मनुष्य बनने का प्रयत्न करना चाहिये और सभी पशु-पक्षियों की रक्षा करने का व्रत लेना चाहिये। हमें प्रसन्नता होती है जब हम यह समाचार पढ़ते हैं कि यूरोप के देशों में शाकाहार बढ़ रहा है। अन्य हिंसक माँसाहारी मनुष्यों को यूरोप के उन शाकाहारी मनुष्यों से प्रेरणा लेनी चाहिये जो माँसाहार का त्याग कर चुके हैं।

ईश्वर के अनेक नामों में एक नाम ''दयालु'' भी है। ऋषि दयानन्द के नाम में भी दया शब्द का प्रयोग हुआ है। दयानन्द शब्द में दया व आनन्द दो शब्दों का योग है। इससे यह प्रतीत होता है कि आनन्द की प्राप्ति के लिए मनुष्य का दयावान होना आवश्यक है। ईश्वर अपना आनन्द उन्हीं मनुष्यों को देता है जो सही अर्थों में सभी प्राणियों वा पशुओं के प्रति दयावान होते

(शेष पृष्ठ २७ पर)

मांसाहार उचित या अनुचित ?

–डॉ० विवेक आर्य (मो०–८०७६९८५५१७)

प्रोफेसर आर्य एवं मौलाना साहिब की भेंट आज बाजार में हो जाती है । मौलाना साहिब जल्दी में थे बोले कि ईद आने वाली है, इसलिए कुरबानी देने के लिए बकरा खरीदने जा रहा हूँ । आर्य सहिब के मन में तत्काल उन लाखों निर्दोष बकरों, बैलों, ऊँटों आदि का ख्याल आया जिनकी गर्दनों पर अल्लाह के नाम पर तलवार चला दी जाएगी । वे सब बेकसूर जानवर धर्म के नाम पर कत्ल कर दिए जायेंगे ।

आर्य जी से न रहा गया और वे मौलाना साहिब से बोले कि–यह कुरबानी मुसलमान लोग क्यों देते हैं ?

यूँ तो मौलाना जल्दी में थे पर जब इस्लाम का प्रश्न हो तो समय निकल ही आया । अपनी लम्बी बकरा दाड़ी पर हाथ फेरते हुए बोले–इसके पीछे एक पुराना किस्सा है । हजरत इब्रहिम से एक बार सपने में अल्लाह ने उनकी सबसे प्यारी चीज यानि उनके बेटे की कुरबानी मांगी । अगले दिन इब्राहिम जैसे ही अपने बेटे इस्माइल की कुरबानी देने लगे, तभी अल्लाह ने उनके बेटे को एक मेढ़े में तब्दील कर दिया और हजरत इब्राहिम ने उसकी कुरबानी दे दी। अल्लाह उन पर बहुत मेहरबान हुआ और बस उसके बाद से हर साल मुसलमान इस दिन को बकर ईद के नाम से मनाते हैं और इस्लाम को मानने वाले बकरा, मेढ़े, बैल आदि की कुरबानी देते हैं। उस बकरे के मांस को गरीबों में बांटा जाता है, इसे जकात कहते हैं । इससे भारी पुण्य मिलता है।

आर्य जी–जनाब अगर अनुमति हो तो मैं कुछ पूछना चाहता हूँ ?

मौलाना जी–बेशक से

आर्य जी–पहले तो यह कि बकर का असली मतलब गाय होता है, न कि बकरा फिर बकरे, बैल, ऊँट आदि की कुरबानी क्यों दी जाती है?

दूसरे बकर ईद के स्थान पर इसे गेंहू ईद कहते तो अच्छा होता क्योंकि एक किलो गोश्त में तो दस किलो के बराबर गेंहू आ जाता है, वो ना केवल सस्ता पड़ता है, अपितु खाने के लिए कई दिनों तक काम में आता है ।

आपका यह हजरत इब्राहिम वाला किस्सा कुछ कम जंच रहा है । क्योंकि अगर इसे सही मानें तो अल्लाह अत्याचारी होने के साथ–साथ क्रूर भी साबित होता है ।

आज अल्लाह किसी मुसलमान के सपने में कुरबानी की प्रेरणा देने के लिए क्यों नहीं आते? क्या आज के मुसलमानों को अपने अल्लाह पर विश्वास नहीं है कि वे अपने बेटों की कुरबानी नहीं देते? बल्कि एक निरपराध पशु के कत्ल के गुनहगार बनते हैं । यह सम्भव ही नहीं है, क्योंकि जो अल्लाह या भगवान प्राणियों की रक्षा करता है, वह किसी के सपने में आकर उन्हें मारने की प्रेरणा क्यों देगा ?

मुसलमानों की बुद्धि को क्या हो गया है? अगर हजरत इब्राहिम को किसी लड़की के साथ बलात्कार करने को अल्लाह कहते तो वे उसे नहीं मानते तो फिर अपने इकलौते लड़के को मारने के लिए कैसे तैयार हो गए? मुसलमानों को तत्काल इस प्रकार का कत्लेआम बंद कर देना चाहिए । मुसलमानों के सबसे पाक किताब कुरान–ए–शरीफ के अल हज २२:३७ में कहा गया है–न उनके मांस अल्लाह को पहुँचते हैं और न उनके रक्त, किन्तु उसे तुम्हारा तकवा (धर्मपारायाणता) पहुँचता है । यही बात अल–अनआम ६:३८ में भी कही

गई है । हदीसों में भी इस प्रकार के अनेक प्रमाण मिलते हैं । यहाँ तक कि मुसलमानों में सबसे पवित्र समझी जाने वाली मक्का की यात्रा पर किसी भी प्रकार के मांसाहार, यहाँ तक कि जूं तक को मारने की अनुमति नहीं होती है। तो फिर अल्लाह के नाम पर इस प्रकार कत्लेआम क्यों होता है?

मौलाना जी—आर्य जी यहाँ तक तो सब ठीक है पर मांसाहार करने में क्या बुराई है ?

आर्य जी—पहले तो शाकाहार विश्व को भुखमरी से बचा सकता है। आज विश्व की तेजी से फैल रही जनसंख्या के सामने भोजन की बड़ी समस्या है । एक कैलोरी मांस को तैयार करने में १० कैलोरी के बराबर शकाहारी पदार्थ की खपत हो जाती है । अगर सारा विश्व मांसाहार को छोड़ दे तो धरती के सीमित संसाधनों का उपयोग सही प्रकार से हो सकता है । कोई भी भूखा नहीं रहेगा,क्योंकि दस गुना मनुष्यों का पेट भरा जा सकेगा । अफ्रीका में तो अनेक मुस्लिम देश भुखमरी के शिकार हैं । अगर ईद के नाम की जकात में उन्हें शाकहारी भोजन दिया जाए तो १० गुणा लोगों का पेट भरा जा सकता है ।

दूसरे मांसाहार अनेक बीमारियों की जड़ है। इससे दिल के रोग, गोउट (Gout), कैंसर जैसे अनेकों रोगों की वृद्धि देखी गई है । एक मिथक यह है कि मांसाहार खाने से ज्यादा ताकत मिलती है । इस मिथक को पहलवान सुशील कुमार ने जो कि विश्व का नंबर एक पहलवान है, और पूर्णरूप से शाकाहारी है, तोड़ दिया है। आपसे ही पूछते हैं कि क्या आप अपना मांस किसी को खाने देंगे? नहीं ना, तो फिर आप कैसे किसी अन्य का मांस खा सकते हैं ?

मौलाना जी—आर्य जी, आप शाकाहार की बात कर रहे हैं तो क्या पौधों में आत्मा नहीं होती? क्या उसे खाने से पाप नहीं लगता? महान वैज्ञानिक जगदीश चन्द्र वसु के मुताबिक तो पौधों में भी जान होती है?

आर्य जी—पौधों में आत्मा की स्थिति सुषुप्ति की होती है। अर्थात् सोये हुए के समान, अगर किसी पशु का कत्ल करे तो उसे दर्द होता है, वो रोता है, चिल्लाता है। मगर किसी पौधे को कभी दर्द होते चिल्लाते नहीं देखा जाता । जैसे कोमा के मरीज को दर्द नहीं होता है। उसी प्रकार से पौधों को भी उखाड़ने पर दर्द नहीं होता है। उसकी उत्पत्ति खाने के लिए ही ईश्वर ने की है। जगदीश वसु का कथन सही है कि पौधों में प्राण होते हैं पर उसमें आत्मा की क्या स्थिति होती है और पौधों को दर्द नहीं होता है। इस बात पर वैज्ञानिक मौन हैं। सबसे महत्त्वपूर्ण बात है कि शाकाहारी भोजन प्रकृति के लिए हानिकारक नहीं है । कुरान या बाइबिल की मान्यता के अनुसार किसी भी पशु को ईश्वर ने भोजन के लिए पैदा किया है तब तो पशुओं की स्वाभाविक प्रवृत्ति यही होनी चाहिए कि वे स्वयं मनुष्य के पास उसका भोज्य पदार्थ बनने के लिए आयें और दूसरे बिना संघर्ष के अपने प्राण दे देने चाहिए?

मौलाना जी—परन्तु हिन्दुओं में कोलकाता की काली और गुवहाटी की कामाख्या के देवी मन्दिर में पशु बलि दी जाती है। वेदों में भी हवन आदि में तो पशुबलि का विधान है ।

आर्य जी—जो स्वयं अंधे हैं वे दूसरों को क्या रास्ता दिखायेंगे? हिन्दू जो पशु बलि में विश्वास रखते हैं खुद ही वेदों की आज्ञा के विरुद्ध कार्य कर रहे हैं। पशु बलि देने से केवल और केवल पाप लगता है। भला किसी को मारकर आपको सुख कैसे मिल सकता है? जहाँ तक वेदों का प्रश्न है तो मध्यकाल में कुछ अज्ञानी लोगों ने हवन आदि में पशु बलि देना आरम्भ कर दिया था। उसे वेद संगत दिखाने के लिए महीधर, सायण आदि ने वेदों के कर्मकांडी अर्थ कर दिए। जिससे पशु बलि का विधान वेदों से सिद्ध किया जा सके। बाद में

मैक्समूलर, ग्रिफिथ आदि पाश्चात्य लोगों ने वेदों के उसी गलत निष्कर्षों का अंग्रेजी में अनुवाद कर दिया। जिससे पूरा विश्व यह समझने लगा कि वेदों में पशु बलि का विधान है। आधुनिक काल में ऋषि दयानन्द ने जब देखा कि वेदों के नाम पर किस प्रकार से घोर प्रपंच किया गया है। तो उन्होंने वेदों का एक नया भाष्य किया जिससे फैलाई गई भ्रान्तियों को मिटाया जा सके । देखो वेदों में पशु रक्षा के विषय में बहुत सुन्दर बात लिखी है–

ऋग्वेद ५।५१।१२ में अग्निहोत्र को अध्वर यानि जिसमें हिंसा की अनुमति नहीं है कहा गया है ।

यजुर्वेद १२।३२ में किसी को भी मारने की मनाही है ।

यजुर्वेद १६।३ में हिंसा न करने को कहा गया है।

अथर्ववेद १९।४८।५ में पशुओं की रक्षा करने को कहा गया है।

अथर्ववेद ८।३।१६ में हिंसा करने वाले को मारने का आदेश है।

ऋग्वेद ८।१०१।१५ में हिंसा करने वाले को राज्य से निष्कासित करने का आदेश है।

इस प्रकार चारों वेदों में अनेकों प्रमाण हैं जिनसे यह सिद्ध होता है कि वेदों में पशु बलि अथवा मांसाहार का कोई वर्णन नहीं है।

मौलाना जी–हमने तो सुना है कि अश्वमेध में घोड़े की, अज मेध में बकरे की, गोमेध में गौ की और नरमेध में आदमी की बलि दी जाती थी।

आर्य जी–आपकी शंका अच्छी है। मेध शब्द का अर्थ केवल मात्र मारना नहीं है। मेधावी शब्द का प्रयोग जिस प्रकार से श्रेष्ठ अथवा बुद्धिमान् के लिए किया जाता है, उसी प्रकार से मेध शब्द का प्रयोग श्रेष्ठ कार्यों के लिए किया जाता है ।

शतपथ १३।१।६।३ एवं १३।२।२।३ में कहा गया है कि जो कार्य राष्ट्र उत्थान के लिए किया जाए उसे अश्वमेध कहते हैं। निघंटु १।१ एवं शतपथ १३।१५।३ के अनुसार अन्न को शुद्ध रखना, संयम रखना, सूर्य की रोशनी से धरती को शुद्ध रखने में उपयोग करना आदि कार्य गोमेध कहलाते हैं । महाभारत शांति पर्व ३३७।१–२ के अनुसार हवन में अन्न आदि का प्रयोग करना अथवा अन्न आदि की उत्पादन क्षमता को बढ़ाना अजमेध कहलाता है। मनुष्य के मृत शरीर का उचित प्रकार से दाह कर्म करना नरमेध कहलाता है ।

मौलाना जी–हमने तो सुना है कि श्री राम जी मांस खाते थे एवं महाभारत वनपर्व २०७ में रांतिदेव राजा ने गाय को मारने की अनुमति दी थी।

आर्य जी–रामायण, महाभारत आदि पुस्तकों में उन्हीं लोगों ने मिलावट कर दी है, जो हवन में पशुबलि एवं मांसाहार आदि मानते थे । वेद स्मृति परम्परा से सुरक्षित हैं इसलिए वेदों में कोई मिलावट नहीं हो सकती। वेदों में से एक शब्द अथवा एक मात्रा तक को बदला नहीं जा सकता। रामायण में सुन्दर कांड स्कन्द ३६ श्लोक ४१ में स्पष्ट कहा गया है कि श्री राम जी मांस नहीं खाते थे वे तो केवल फल अथवा चावल खाते थे ।

महाभारत अनुशासन पर्व ११५।४० में रांतिदेव को शाकाहारी बताया गया है ।

शान्ति पर्व २६१।४७ में गाय और बैल को मारने वाले को पापी कहा गया है। इस प्रकार के अन्य प्रमाण भी मिलते हैं, जिनसे यह भी सिद्ध होता है कि रामायण एवं महाभारत में मांस खाने की अनुमति नहीं है। जो भी प्रमाण मांसाहार के समर्थन में मिलते हैं, वे सभी सब मिलावट है ।

मौलाना जी–तो क्या आर्य जी हमें किसी को भी मारने की इजाजत नहीं है?

आर्य जी–बिल्कुल मौलाना सहिब। यहाँ तक कि कुरान के उस अल्लाह को ही मानना चाहिए जो अहिंसा, सत्य, प्रेम, भाईचारे का सन्देश देता है। कुरबानी, मारना, जलना, घृणा करना, पाप करना आदि सिखाने वाली बातें ईश्वरकृत नहीं हो सकतीं।

(शेष पृष्ठ २६ पर)

लोहारू कांड–

स्वामी स्वतन्त्रतानन्द जी महाराज

–डॉ० रणजीत सिंह

(स्रोत : आर्यसमाज हरियाणा का इतिहास)

आर्यसमाज के क्षितिज पर स्वामी स्वतन्त्रतानन्द का उदय हुआ । सामाजिक और सार्वजनिक रूप से स्वामी जी का कार्यक्षेत्र में अवतरण आर्यसमाज सिरसा जिला हिसार में हुआ । सिरसा आर्यसमाज की स्थापना सन् १८९२ में हो चुकी थी । स्वामी जी सिरसा आर्यसमाज के उत्सव पर दर्शक के रूप में गये थे । परन्तु उन्हें वक्ता के रूप में व्याख्यान देना पड़ा । इसका परिणाम यह हुआ कि सभा में बोलने का संकोच दूर हो गया ।

जिला करनाल में संभलका में खुलने वाले बूचड़खाने के विरोध में जो आर्यसमाजी संगठन खड़ा हुआ था उसमें भक्त फूलसिंह और चौधरी पीरूसिंह के साथ मिलकर गोरक्षा हेतु एक सफल आन्दोलन चलाया था । स्वामी जी समझते थे, यदि हरियाणा एक बार जाग जाए तो आर्य समाज सदा के लिए अमर रह सकेगा । क्योंकि हरियाणा के लोगों की मनोवृत्ति आर्यसमाज के अत्यधिक अनुकूल है । हरियाणा जागृति के लिए स्वामी जी ने अनेक बार हरियाणा का भ्रमण किया। चौधरी छोटूराम जी स्वामी जी के भक्त थे, अत: हरियाणा भ्रमण में स्वामी जी को कोई कठिनाई नहीं हुई । आर्य नेता जगदेव सिंह सिद्धान्ती और आचार्य भगवान देव जी बारी–बारी आपके साथ रहे ।

इस यात्रा के दौरान स्वामी जी जिला रोहतक के ग्राम भापड़ोदा में भी गये, और लोगों से कहा कि आप सेना में भर्ती अपने भाइयों से कहें कि वे अपने भाइयों पर गोली न चलावें । यह बात सन् १९४२ के पास की है । अंग्रेज सरकार को जब यह पता चला कि स्वामी जी सेना में विद्रोह कराना चाहते हैं तो उन्हें पकड़ लिया । लाहौर के किले में बन्द कर दिये जाने पर भी स्वामी जी का चौधरी छोटूराम से लगाव रहा । महाशय कृष्ण ने इस लगाव को एक लेख में प्रकट करते हुए कहा है—"किला के अधिकारी ने स्वामी जी से कहा कि आपके पास बिस्तर नहीं है, बताएं किसके घर से बिस्तर मंगवाएं ? इस पर स्वामी जी ने महाशय कृष्ण और दीवान बद्रीदास के नामों के साथ चौधरी छोटूराम का भी नाम लिया ।"

पांच जनवरी १९४७ को जगदेव सिंह सिद्धान्ती स्वामी जी से दिल्ली में मिले और पुन: हरियाणा में स्वामी जी के भ्रमण का कार्यक्रम बनाया । यह यात्रा राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रसार, मांस और शराब आदि व्यसनों को दूर करने के उद्देश्य से की गई । इसी यात्रा के मध्य स्वामी जी ने भाषा ओर लिपि की समस्या पर एक छोटी सी पुस्तक भी लिखी । इसे हरियाणा के नेताओं ने दस हजार की संख्या में छपवाकर वितरित किया । स्वामी जी संयुक्त पंजाब में हरियाणा की उपेक्षा करने की सरकारी नीति के विरोधी थे । अत: वह समझते थे कि सरकार की भाषानीति हरियाणा को ओर भी पिछड़ा बना देगी । देश विभाजन के उपरान्त रोहतक में दयानन्द मठ स्थापित करने के लिए चौधरी माडूसिंह जी और महाशय भरत सिंह आदि महानुभाव स्वामी जी के पास आए । स्वामी जी के आदेश पर १६ मार्च १९४८ को स्वामी सोमानन्द जी रोहतक गए और वहाँ लगभग २४ वर्ष कार्य किया । पूज्य स्वामी जी की डायरी से पता चलता है, उन्होंने १६ जून १९४९ को दयानन्द मठ रोहतक की कार्यकारिणी की एक बैठक की अध्यक्षता की थी । लोहारू कांड के आप नायक ही थे । १९४१ ई० में आर्यसमाज

लोहारू के उत्सव पर स्वामी जी तथा उनके अन्य साथियों पर नवाब ने जानबूझकर आक्रमण करवाया था । इस अवसर पर विशेष रूप से उन सरकारी कर्मचारियों को लोहारू स्थानांतरित कर दिया गया था, जिन्होंने १९३५ ई० के लोहारू "जाट आन्दोलन" में ३५ आदमियों को गोलियों का शिकार बना दिया गया । इस आक्रमण में भक्त फूलसिंह और चौधरी न्योनन्द सिंह धनखड़ (स्वामी नित्यानन्द) भजनोपदेशक बुरी तरह घायल हो गए थे । चौधरी शेर सिंह के पिता चौधरी शीशराम जी स्वामी जी के साथ थे । शीशराम जी ने भागदौड़ कर गाय का गर्म दूध व हल्दी का प्रबन्धन किया । और स्वामी जी को दूध हल्दी पिलाया । राज्य के अधिकारियों के कहने पर स्वामी जी के नेतृत्व में जुलूस चला और साथ में ही जमालुद्दीन इंस्पेक्टर के साथ २५ सिपाही भी चले । मंडी से निकलने पर जमालुद्दीन ने जुलूस रोका और स्वयं शहर में जाकर थाने के सामने आर्यसमाज विरोधियों को इकट्ठा किया । जुलूस जब थाने के पास आया तो उसने देखा कि इच्छानुसार आगे आदमियों का समूह लाठी, कुल्हाड़ी और भाले लिए खड़ा है । सिपाही बंदूकों की नाल दीवार पर रखकर जुलूस की ओर मुख किये खड़े हैं, कार्यकर्त्ताओं को परिस्थितियों को देखते ही समझने में देर नहीं लगी । दिन छिप रहा था, इंस्पेक्टर ने कहा स्वामी जी आप ठहरें नमाज का समय है । स्वामी जी ने कहा ठीक है, हमारा भी संध्या का समय है । खड़े होकर सारे जुलूस ने संध्या आरम्भ कर दी । संध्या समाप्त होते ही इंस्पेक्टर ने कहा—स्वामी जी आप जुलूस को ठाकुरों वाली दूसरी गली में ले जावें, जुलूस जब दूसरी गली में मुड़ा तो जमालुद्दीन के इशारे पर भीड़ एकदम जुलूस पर टूट पड़ी । वस्तुतः नमाज और संध्या के समय का तो इंस्पेक्टर बहाना बना रहा था । उसकी चाल थी कि अंधेरा और घनेरा हो जाए जिससे जुलूस पर आक्रमण करने वाले व्यक्ति गुरिल्ला ढंग से मार भी कर जाएं और पहचाने भी न जाएं । इंस्पेक्टर अपनी नीति में सफल हुआ ।

आक्रमण का सबसे अधिक जोर स्वामी जी पर था । पहले तो वे प्रत्येक वार को अपने डंडे से रोकते रहे, परन्तु जब उनका डंडा टूट गया तो उनके सिर और हाथों पर वार होने लगे । परिणामस्वरूप उनके शरीर पर बहुत अधिक चोटें आईं । इनके अतिरिक्त भक्त फूलसिंह, चौधरी शीशराम, चौधरी गाहड़ सिंह, चौधरी न्योनन्द सिंह और जयप्रकाश धनुर्धर आदि को बहुत सख्त चोटें आईं ।

लोहारू के जिन लोगों पर इस कांड के प्रसंग में अभियोग चलाया गया, उनकी पैरवी का प्रबन्ध सभा ने किया । २६ अप्रैल १९४१ को बख्शी रामाकृष्ण एडवोकेट हिसार, ला० सुखदेव जी हिसार और ला० सत्यभूषण जी एडवोकेट डेरा गाजीखां लोहारू गए । वे वहाँ अभियुक्तों और रियासतों के दीवान से भी मिले । ला० सत्यभूषण ने सभा को सूचना दी कि दीवान साहेब अभियुक्तों पर से अभियोग वापिस लेने के लिए तैयार हैं और उन्होंने शर्त मान ली है । लोहारू कांड मुकद्दमे के बीच में ही स्वामी कर्मानन्द जी का आगमन आर्य समाज लोहारू के लिए वरदान सिद्ध हुआ। स्वामी जी ने लोहारू के आर्यों को उत्साहित किया और आर्य समाज लोहारू का फिर से चुनाव किया ।

आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द के आदर्शों की पूर्ति के लिए जहाँ गुरुकुल खोले, वहाँ आर्य पाठशालाएं स्थापित की गईं । परन्तु रियासत द्वारा पाठशालाएं खोलने पर पाबंदी थी लेकिन स्वामी कर्मानन्द जी ने भूख हड़ताल कर दी । परिणामस्वरूप लोहारू के दीवान ने पाबंदी उठा ली । इस प्रकार लोहारू रियासत में आर्य पाठशालाओं का कार्य आरम्भ हो गया ।

समय-समय पर जब भी देश धर्म पर आपत्ति आई है आर्यसमाज ने उसका डटकर मुकाबला किया है । ❑❑

भारतीय शिक्षा का सर्वनाश

–आचार्य भगवान देव (गुरुकुल झज्जर)

अंग्रेजों के भारत आने से पूर्व यूरोप के किसी भी देश में इतना शिक्षा का प्रचार नहीं था जितना कि भारतवर्ष में था । भारत विद्या का भण्डार था। सार्वजनिक शिक्षा की दृष्टि से भारत सब देशों का शिरोमणि था । उस समय असंख्य ब्राह्मण प्राचार्य अपने-अपने कुल में शिष्यों को शिक्षा देते थे । मुख्य-मुख्य नगरों में विद्यापीठें स्थापित थीं। छोटे बालकों की शिक्षा के लिए प्रत्येक ग्राम में पाठशालायें थीं । जिनका संचालन पंचायतों की ओर से किया जाता था । इंगलिस्तान पार्लियामेंट के सदस्य केर हार्डी ने अपनी पुस्तक 'इण्डिया' में लिखा है–

"मैक्समूलर ने, सरकारी उल्लेखों और मिश्नरी की रिपोर्ट के आधार पर जो बंगाल पर कब्जा होने से पूर्व वहाँ की शिक्षा की अवस्था के सम्बन्ध में लिखी गई थी, लिखा कि उस समय बंगाल में ८० हजार पाठशालायें थीं ।"

सन् १८२३ ई० की 'कम्पनी' की एक सरकारी रिपोर्ट में लिखा है–"शिक्षा की दृष्टि से संसार के किसी भी अन्य देश में किसानों की अवस्था इतनी ऊंची नहीं है जितनी कि ब्रिटिश भारत के अनेक भागों में ।"

"भारत के जिस-जिस प्रान्त में 'कम्पनी' का राज्य स्थापित होता गया उस-उस प्रान्त में सहस्त्रों वर्ष पुरानी शिक्षा प्रणाली सदा के लिए मिटती चली गई । ग्राम पंचायतों और देशी रियासतों के साथ-साथ पाठशालाओं का भी लोप होता चला गया । क्योंकि ग्राम पंचायतें पाठशालाओं का प्रबन्ध करना अपना कर्तव्य समझती थीं और देशी रियासतों के राजाओं की आय का बहुत बड़ा भाग शिक्षा प्रचारार्थ पाठशालाओं को दिया जाता था। यह सहायता मासिक और वार्षिक बंधी हुई थी।

हमारे प्राचीन इतिहास और साहित्य को नष्ट कर उसके स्थान में मिथ्या इतिहास लिखवाकर भारतीय स्कूलों में पढ़ाना प्रारम्भ किया गया, सखेद लिखना पड़ता है कि वही मिथ्या इतिहास लिखवाकर भारतीय स्कूलों में पढ़ाना प्रारम्भ किया गया, सखेद लिखना पड़ता है कि वही मिथ्या इतिहास स्वतन्त्र भारत में आज भी पढ़ाया जा रहा है। सन् १७५७ से लेकर १८५७ तक निरन्तर एक शताब्दी तक यह विवाद रहा कि भारतीयों को शिक्षा देना अंग्रेजों की राज्य सत्ता के लिए हितकर है या अहितकर । प्रारम्भ में प्रायः सभी अंग्रेज शासक भारतीयों को शिक्षा देने के कट्टर विरोधी थे । जे०सी० मार्शमैन ने १५ जून १८५३ ई० को पार्लियामेंट की सिलेक्ट कमेटी के सन्मुख साक्षी देते हुए कहा था ।

"भारत में अंग्रेजी राज्य के कायम होने के बहुत दिन बाद तक भारतवासियों को किसी प्रकार की भी शिक्षा देने का प्रबल विरोध किया जाता रहा ।"

भारतीयों में शिक्षा का ह्रास हो गया । अंग्रेज शासकों को सरकारी विभागों में हिन्दुस्तानी कर्मचारियों की आवश्यकता अनुभव हुई, क्योंकि इनके बिना उनका कार्य चल सकना सर्वथा असम्भव था । १८वीं शताब्दी के अन्त में अंग्रेज शासकों के विचारों में परिवर्तन हुआ । उन्होंने अपनी आवश्यकता पूर्ति के लिए ऐसी शिक्षा प्रणाली प्रचलित की जिससे लेखक (क्लर्क) तैयार किये जा सकें । डायरेक्टरों ने ५ सितम्बर, १८२७ के पत्र में गवर्नर जनरल को लिखा कि इस शिक्षा का धन, उच्च और मध्यम श्रेणी के उन भारतवासियों पर व्यय

किया जाये, जिनमें से कि आपको अपने शासन के कार्यों के लिए सबसे अधिक योग्य देशी एजेन्ट मिल सकते हैं और जिनका अपने देश वासियों के ऊपर अधिक प्रभाव है ।

इस प्रकार अंग्रेजों ने भारत की प्राचीन शिक्षा प्रणाली को नष्ट कर दिया । जिससे भारत में विद्वानों का अभाव होता गया और क्लर्कों की वृद्धि होती गई । क्योंकि शिक्षित भारतीयों से अंग्रेज बहुत डरते थे । अंग्रजों का अतीत काल इतना प्रभावशाली न था जितना भारतीयों का । भातरवासियों को ज्यों-ज्यों ब्रिटिश भारतीय इतिहास के आन्तरिक वृत्तान्त का ज्ञान होता है, त्यों-त्यों उनके चित्त में यह विचार उत्पन्न होता है कि भारत जैसे विशाल देश पर मुट्ठी भर विदेशियों का आधिपत्य होना बड़ा भारी अन्याय है । अतएव उनकी इच्छा हो जाती है कि वे अपने देश को इस विदेशी शासन से स्वतन्त्र कराने में सहायक हों । यह मैं नहीं लिख रहा अपितु एक अनुभवी अंग्रेज मेजर रालेण्डसन जो वहाँ की शिक्षा-कमेटी का मन्त्री भी रह चुका है, उसने ४ अगस्त १८५३ ई० में पार्लियामेंट कमेटी के सम्मुख ऐसी सम्मति प्रकट की थी । इसीलिए अंग्रेजों ने हमारे इतिहास, सहित्य और शिक्षा प्रणाली का सर्वनाश कर डाला । ❑❑

गीत

तर्ज : ऊँची ऊँची दुनिया की दीवरें....

संवाद लड़की और स्वामी जी का

स्वामी जी कहने लगी लड़की हाथ जोड़ कै, जी जोड़ कै,
मैं आई हूं तेरे लिए सारी काशी छोड़ कै ॥टेक॥

ब्रह्मचर्य के बाद गृहस्थ तुम रोजाना बतलाते हो ।
क्यों व्यर्थ हमें बहकाते हो ?
बतला दो स्वामी जी क्यों ना शादी करवाते हो,
हमको उपदेश सुनाते हो ।
आप क्या सुख पाओगे वैदिक मर्यादा तोड़ कै जी, तोड़ कै ।।१।।

स्वामी जी ने कहा माता ये कोई बात जरूरी नहीं ।
अखण्ड ब्रह्मचारी रहने से टूटता दस्तूर नहीं ।
कभी लो संन्यास चाहे विषयों से मुँह मोड़ कै जी, मोड़ कै ।।२।।

लड़की ने कहा बनो गृहस्थी जग में मौज उड़ावैंगे ।
दोनों शादी करावैंगे ।
दो दिन की जिन्दगानी है एक रोज यहाँ से जावेंगे,
दोनों कुछ कर दिखलावेंगे ।।
मनुष्य तन का चोला यह मिलता नहीं बोहड़ कै जी, बोहड़ कै ।।३।।

स्वामी जी ने कहा मात ये इच्छा अभी मिटा ले तू ।
मुझको बेटा समझ मात गोदी मैं मनै बिठाले तू ।।
चन्द्रभान कहै दाग मत ना लावै खोड़ कै जी, खोड़ कै ।।४।। ●●

काशी में चरित्र की परीक्षा

रचयिता : स्व० पं० चन्द्रभानु आर्योपदेशक
संस्थापक, सम्पादक शान्तिधर्मी, हिन्दी मासिक जींद

बाहर बाग में ठहर गए और वहीं तीन व्याख्यान हुए ।
सज्जन तो प्रसन्न हुए पर पाखण्डी परेशान हुए ॥

पहले दिन स्वामी ने कहा कि जीव ब्रह्म हो एक नहीं ।
जो है इनको एक मानता उसको सत्य विवेकी नहीं ।
सत्यमार्ग है ब्रह्म प्राप्ति होते कोई अनेक नहीं ।
जिस प्रकार से आप मानते ये ऋषियों का लेख नहीं ।
असत्य मार्ग को अपना करके दु:खी बहुत इन्सान हुए ।।१।।

दूसरे दिन स्वामी जी ने मूर्ति पूजा को बिसराया ।
सुन करके व्याख्यान सभी पोपों में था गुस्सा आया ।
पहले शास्त्रार्थ की सोची फिर मारने को ठहराया ।
करके मुनादी माधोदास ने सब पण्डितों को बुलवाया ।
स्वामी को नीचा दिखलाने जमा वहाँ विद्वान् हुए ।।२।।

माधोदास की एक लड़की थी बड़ी सुशिक्षा यूँ बोली ।
हाथ जोड़कर आज रात की माँगूं भिक्षा न्यूँ बोली ।
सिर्फ सवेरे तक करनी होगी प्रतीक्षा न्यूँ बोली ।
आज रात को उस साधु की करूँ परीक्षा न्यूँ बोली ।
लड़की की रक्षा करने को संग में बीस जवान हुए ।।३।।

लगभग १८ साल की आयु लड़की की बतलाते हैं ।
स्वामी जी के निकट जाय कर सभी जवान छुप जाते हैं ।
देवी को आते देखा तो स्वामी शीश झुकाते हैं ।
अर्ध निशा में कहाँ माताजी इस प्रकार फरमाते हैं ।
चन्द्रभान कहे लड़की बोली ये तो जुल्म महान् हुए ।।४।।

मांसाहार उचित या अनुचित (पृष्ठ २१ का शेष)

हदीस जद अल-माद में इब्न कय्यिम ने कहा है कि "गाय के दूध-घी का इस्तेमाल करना चाहिए, क्योंकि यह सेहत के लिए फायदेमंद है और गाय का मांस सेहत के लिए नुकसानदायक है।"

मौलाना जी—आर्य जी, आपकी बातों में दम बहुत है और साथ ही साथ वे मुझे जँच भी रही हैं। अब मैं कभी भी जीवन भर मांस नहीं खाऊँगा। ईद पर बकरा नहीं काटूँगा और साथ ही साथ अपने अन्य मुस्लिम भाइयों को भी इस सत्य के विषय में बताऊँगा ।

आर्य जी, आपका सही रास्ता दिखाने के लिए अत्यन्त धन्यवाद । ❑❑

देशभक्त या आतंकवादी (पृष्ठ १५ का शेष)

स्वामियों से बढ़ कर सुसंगठित हो ही नहीं सकते? आप किस तर्क और युक्ति सम्मत तथ्य के आधार पर उन सम्भावनाओं को गलत साबित कर सकते हैं, जिनमें क्रान्तिकारी असीम विश्वास रखते हैं ? और अहिंसा की वह भावना, जो इस प्रकार की बेबसी और निराशा की अनुभूति से उत्पन्न होती है । कभी शक्तिशाली की अहिंसा, भारतीय ऋषियों की अहिंसा नहीं हो सकती । यह है शुद्ध 'तमस्' ।

मुझे क्षमा कीजियेगा महात्मा जी यदि मैं आपके दर्शन और आपके सिद्धान्तों की आलोचना करत-करते कठोर हो गया हूँ । आपने क्रान्तिकारियों की आलोचना बड़ी हृदयहीनता के साथ की है और उनका वर्णन करते हुए आपने उन्हें देश का दुश्मन तक कह डाला है, केवल इसलिए कि वे आपके विचारों और आपके तरीकों से मतभेद रखते थे । आप सहिष्णुता का उपदेश देते हैं, परन्तु क्रान्तिकारियों की अपनी आलोचना में आप उग्रता की सीमा तक असहिष्णु हो गये हैं । क्रान्तिकारियों ने अपनी मातृभूमि की सेवा के लिए अपना सब कुछ संकट में डाल दिया है और यदि आप उनकी सहायता नहीं कर सकते हैं, तो कम से कम उनके प्रति असहिष्णु तो न बनें । (साभार-राष्ट्रधर्म) ❑❑

मनुष्य की ही तरह पशु-पक्षियों को भी जीने का अधिकार है (पृष्ठ १८ का शेष)

हैं। हमें सच्चा मनुष्य बनने के लिये ईश्वर के गुणों को धारण करना होता है। यदि हम दयालु नहीं बने तो हम ईश्वर का सहाय व कृपा को प्राप्त नहीं कर सकते। दयालु बनने का अर्थ है कि सभी प्राणियों पर दया करना, प्रेम करना, उनसे सहानुभूति व संवेदना रखना। ऐसा मनुष्य ही वास्तवकि मनुष्य कहला सकता है। हमें सच्चा मनुष्य बनने का प्रयत्न करना चाहिये। जितना जीवन जीने का अधिकार हम मनुष्यों को है, वैसा ही अधिकार परमात्मा द्वारा उत्पन्न सभी अहिंसक पशु व पक्षियों को भी है। इसको जानकर हमें तदवत् व्यवहार करना है। ऋषि दयानन्द ने मनुष्य की परिभाषा करते हुए कहा कि मनुष्य उसी को कहना कि जो स्वात्मवत् होकर अपने व दूसरों के सुख दुःख व हानि लाभ को समझे। मनुष्य को सभी प्राणियों के प्रति स्व-आत्म-वत् अनुभूति एवं व्यवहार को करना है। इसी से मनुष्य जाति की रक्षा सहित सृष्टि में समस्त प्राणियों की रक्षा होकर सभी को सुख प्राप्त हो सकता है । ओ३म् शम् । ❑❑

पूर्वमीमांसा के आधार पर दिए गए कुछ नैयायिक निर्णय (पृष्ठ ८ का शेष)

समान सरलता यहाँ नहीं है ।

इस प्रकार हम पाते हैं कि मीमांसा के सिद्धान्त कई प्रकरणों को समझने के लिए लाभकारी ही नहीं, अपितु अनिवार्य भी हो जाते हैं। इससे जान पड़ता है कि इस ग्रन्थ की आज के समय में जो अवहेलना हो रही है, वह अत्यन्त शोचनीय है । न्यायसंहिता के लिए ही नहीं, वेद संहिता के लिए ही नहीं, अपितु स्वयं धर्म को समझने के लिए पूर्वमीमांसा एक आवश्यक साधन है । इसीलिए तो महर्षि जैमिनि ने अपने कालजयी ग्रन्थ का आरम्भ इन शब्दों से किया है-**अथातो धर्मजिज्ञासा** । वस्तुतः, वेदों का धर्मोपदेश जहाँ-जहाँ अस्पष्ट है, वहाँ मीमांसा के सिद्धान्त ही हमें अर्थ के पार पहुँचा सकते हैं । व्याख्याएं केवल ब्राह्मण-ग्रन्थों से उदाहरण लेकर लिखी गई हैं । मीमांसकों को इन सिद्धान्तों को वेदों पर भी घटाना चाहिए, जैसा कि मैंने ऊपर दिए उदाहरणों में दर्शाया है । ❑❑

आर. एन. आई. नं० १६३३०/६७ Post in Delhi R.M.S ०५-११/०८/२०२१ भार- ४० ग्राम	**अगस्त 2021**	रजिस्टर्ड नं० DL (DG -11)/8029/2021-23 लाईसेन्स नं० यू (डी०एन०) १४४/२०२१-२३ Licenced to post without prepayment Licence No. U (DN) 144/2021-23

पाठकों से निवेदन

१. अपने पत्रों में अपनी ग्राहक संख्या अवश्य ही लिखा करें, अन्यथा कार्यवाही सम्भव नहीं होगी।

२. १५ तारीख तक प्रतीक्षा करके ही दुबारा अंक मँगाएं, यदि अंक न पहुँचा हो।

३. यदि आप अपना पता बदलवायें तो यह ध्यान रखें कि बदले हुए पते पर अंक-प्रेषण एक माह बाद आरम्भ होगा।

४. अंक के रेपर पर अपना पता चैक कर लिया करें। यदि कोई त्रुटि हो, तो सूचना दे दिया करें।

५. जिन ग्राहकों का शुल्क समाप्त है, अविलम्ब भेजने की कृपा करें।

दिनेश कुमार शास्त्री
कार्यालय व्यवस्थापक
मो०-९६५०५२२७७८

ओ३म्

भारत में फैले सम्प्रदायों की निष्पक्ष व तार्किक समीक्षा के लिए उत्तम कागज़, मनमोहक जिल्द, सुन्दर आकर्षक छपाई एवं (द्वितीय संस्करण से मिलान कर शुद्ध प्रामाणिक संस्करण)

सत्य के प्रचारार्थ

सत्यार्थ प्रकाश

सत्य के प्रचारार्थ

● **प्रचार संस्करण (अजिल्द)** 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 50 रु.	प्रचारार्थ 30 रु.	प्रचारार्थ मूल्य पर कोई कमीशन नहीं
● **विशेष संस्करण (सजिल्द)** 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 80 रु.	प्रचारार्थ 50 रु.	
● ***उपहार संस्करण***	मुद्रित मूल्य 1100 रु.	प्रचारार्थ 750 रु.	
● **स्थूलाक्षर सजिल्द** 20×30, 8	मुद्रित मूल्य 150 रु.		प्रत्येक प्रति पर 20% कमीशन

कृपया, एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें और महर्षि दयानन्द की अनुपम कृति सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार प्रसार में सहभागी बनें

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट
427, मन्दिर वाली गली, खारी बावली, दिल्ली-6
Ph. :011-43781191, 09650522778
E-mail : aspt.india@gmail.com

छपी पुस्तक/पत्रिका

श्री सेवा में.....
ग्राम.....
डा०.....
जिला.....

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक धर्मपाल आर्य, स्वामित्व आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, ४२७, गली मन्दिर वाली, नया बांस, खारी बावली, दिल्ली-११०००६ से प्रकाशित एवं तिलक प्रिंटिंग प्रेस, २०४६, बाजार सीता राम, दिल्ली-११०००६ से मुद्रित।